# पूर्वांचल खेती

वर्ष : 30 अप्रैल 2020 अंक : 04

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

# पूर्वांचल खेती

**प्रसार निदेशालय**

**आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय**

**कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)**

# पूर्वांचल खेती

वर्ष 30 | अप्रैल, 2020 | अंक 04



**संरक्षक**

**डॉ. बिजेन्द्र सिंह**

कुलपति

**प्रधान सम्पादक**

**प्रो. ए. पी. राव**

निदेशक प्रसार

**तकनीकी सम्पादक**

**डॉ. आर. आर. सिंह**

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

**सम्पादक मण्डल**

**डॉ. अनिल कुमार**

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

**डॉ. वी. पी. चौधरी**

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

**डॉ. पंकज कुमार**

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

**सम्पादक**

**उमेश पाठक**

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है


## विषय सूची


**धान की उपयुक्त प्रजातियॉ एवं नर्सरी प्रबन्ध** 01
आर0आर0 सिंह, अशोक कुमार सिंह, सौरभ वर्मा एवं आर0एल0 सिंह

**फसल अवशेष के इन–सीटू प्रबन्ध हेतु कृषि मशीनीकरण** 05
–डॉ0 के0एम0 सिंह, डॉ0 सियाराम, डॉ0 एल0सी0 वर्मा, डॉ0 एस0एन0 सिंह एवं डॉ0 आर0के0 सिंह'

**हल्दी, सूरन व अदरक उत्पादन की उन्नत तकनीक** 09
राजीव कुमार सिंह, अजीत कुमार श्रीवास्तव, सुरेन्द्र प्रताप सोनकर एवं मिथिलेश कुमार पाण्डेय

**मूंग की उन्नत खेती में सामयिक कार्य** 14
संजीत कुमार, ए. पी. राव एवं नरेंद्र प्रताप

**जायद सब्जियों का समेकित कीट प्रबंधन** 17
डॉ. प्रेम शंकर, शैलेन्द्र सिंह, डॉ. रविप्रकाश मौर्य एवं प्रदीप कुमार

**फलदार वृक्षों में सामयिक कार्य** 20
डॉ0 विनोद कुमार सिंह एवं डॉ0 प्रमोदकुमार सिंह

**दुधारू पशुओं का पोषण प्रबन्ध** 22
डा. एल. सी. वर्मा, एवं डा. डी. पी. सिंह

**कार्प मछलियों का कृत्रिम विधि द्वारा बीज उत्पादन** 26
डॉ0 प्रमोद कुमार एवं प्रो0 ए0 पी0 राव

**मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन** 29
डा0 रणधीर नायक एवं प्रो0 आर0आर0 सिंह

**शिशु मक्का (बेबी कार्न) की खेती** 34
रेनू आर्या, उमेश बाबू एवं आर0के0 सिंह

**अप्रैल माह में किसान भाई क्या करें** 38

**प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के** 39


## बॉक्स सूचनाएं


अमूल्य सुझाव 33
पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये 37
कृषि लागत कम करने हेतु सुझाव 37



**प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या**

## विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

| क्र. सं. | कृषि विज्ञान केन्द्र | वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी | मोबाइल | दूरभाष कार्यालय |
|---|---|---|---|---|
| 1. | वाराणसी | डॉ. संजीत कुमार | 9837839411 | 05542–248019 |
| 2. | बस्ती | डॉ. एस. एन. सिंह | 9450547719 | 05498–258201 |
| 3. | बलिया | डॉ. रवि प्रकाश मौर्य | 9453148303 | – |
| 4. | फैजाबाद | डॉ. शशिकान्त यादव | 9415188020 | 05278–254522 |
| 5. | मऊ | डॉ. एस. एन. सिंह चौहान | – | 0547–2536240 |
| 6. | चंदौली | डॉ. एस. पी. सिंह | 9458362153 | 0541–2260595 |
| 7. | बहराइच | डॉ. एम. पी. सिंह | 9415172725 | 05252–236650 |
| 8. | गोरखपुर | डॉ. सतीश कुमार तोमर | 9415155818 | – |
| 9. | आज़मगढ़ | डॉ. के. एम. सिंह | 9307015439 | – |
| 10. | बाराबंकी | डॉ. शैलेश कुमार सिंह | 9455501727 | |
| 11. | महाराजगंज | डॉ. डी. पी. सिंह | 9451430507 | – |
| 12. | जौनपुर | डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया | 9984369526 | – |
| 13. | सिद्धार्थनगर | डॉ. एल. सी. वर्मा | 7376163318 | 05541–241047 |
| 14. | सोनभद्र | डॉ. पी. के. सिंह | 9415450175 | – |
| 15. | बलरामपुर | डॉ. वी. पी. सिंह | 9839420165 | – |
| 16. | अम्बेडकरनगर | डॉ. रामजीत | 9918622745 | – |
| 17. | संतकबीरनगर | डॉ. अरविन्द सिंह | 9415039117 | – |
| 18. | अमेठी | डॉ. रतन कुमार आनन्द | 9838952621 | – |
| 19. | बहराइच (नानपारा) | डॉ. विनायक शाही | 8755011086 | – |
| 20. | मनकापुर–गोण्डा | डॉ. ओम प्रकाश | 9452489954 | – |
| 21. | बरासिन–सुल्तानपुर | डॉ. एस. के. वर्मा | 9450885913 | – |
| 22. | अमहित–जौनपुर | डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी | – | – |
| 23. | गाजीपुर | डॉ. आर. सी. वर्मा | 9411320383 | – |

## विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

| क्र.सं. | कृषि विज्ञान केन्द्र | प्रभारी अधिकारी/ | मोबाइल | दूरभाषा कार्यालय |
|---|---|---|---|---|
| 1. | अमेठी | डॉ. शशांक शेखर सिंह | – | – |
| 2. | गोण्डा | डॉ. ए. पी. राव | 9415720376 | – |
| 3. | देवरिया | श्रीमती सरिता श्रीवास्तव | 9415419712 | – |
| 4. | गाजीपुर | डॉ. ए. पी. राव | 9415720376 | – |

## विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

| क्र.सं. | कृषि अनुसंधान केन्द्र | प्रभारी अधिकारी/ | मोबाइल | दूरभाषा कार्यालय |
|---|---|---|---|---|
| 1. | मसौधा, फैजाबाद | डॉ. डी. के. द्विवेदी | 7706884188 | 05278–254153 |
| 2. | तिसुही, मिर्जापुर | डॉ. एस. के. सिंह | 9450164714 | 05442–284263 |
| 3. | बसुली, महाराजगंज | डॉ. डी. पी. सिंह | 9451430507 | – |
| 4. | घाघरा घाट, बहराइच | डॉ. तेजेन्द्र कुमार | 9415560503 | 0525–235205 |
| 5. | बड़ा बाग, गाजीपुर | डॉ. सी. पी. सिंह | 9628631637 | – |
| 6. | बहराइच | डॉ. गजेन्द्र सिंह | 7379576412 | 0548–223690 |

**प्रो. ए. पी. राव**
**निदेशक प्रसार**

**आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय**
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

# सम्पादकीय

वर्तमान में कोविद–19 से पूरा विश्व प्रभावित है जो कुपोषित लोगों को ज्यादा प्रभावित कर रहा है। कुपोषण विकासशील देशों की एक प्रमुख समस्या है जो मानव विकास को प्रभावित करता है। कुपोषण का मुख्य शिकार ग्रामीण क्षेत्रों व शहरी झोपड़पट्टी में रहने वाली महिलायें व बच्चे हैं। मानव शरीर की वृद्धि एवं विकास के लिए विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इन पोषक तत्वों को दो वर्गों में बांटा जा सकता हैः स्थूल (मेक्रो) पोषक तत्व जैसेः– प्रोटीन, वसा, कार्बोज आदि। यह पोषक तत्व शरीर को अधिक मात्रा में चाहिए होते हैं। दूसरा वर्ग सूक्ष्म पोषक तत्व (माइक्रो) कहलाता है। शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों पोषक तत्वों की आवश्यका होती है।

खाद्य उत्पादन में उन्नति के परिणामस्वरूप स्थूल पोषक तत्वों की आवश्यकता काफी हद तक पूरी हो गई है परन्तु सूक्ष्म पोषक तत्वों मुख्यतः लोहा (आयरन), विटामिन 'ए', आयोडीन, फोलिक अम्ल, जिंक आदि की कमी आज भी हमारी जनसंख्या के बहुत बड़े हिस्से को प्रभावित कर रही है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी अधिक खतरनाक है क्योंकि एक तो इसके लक्षण आसानी से परिलक्षित नहीं होते, दूसरा जो लोग इससे ग्रसित हैं वे भी आसानी से नहीं जान पाते कि इन्हें ऐसी कोई कमी है। लोहा, फोलिक अम्ल व विटामिन बी12 की कमी से रक्तालपता हो जाती है जिसके कारण मातृ एवं शिशु मृत्यु दर बढ़ जाती है, शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है। कार्य करने की क्षमता, उत्पादकता, सीखने की क्षमता तथा एकाग्रता में भी कमी आ जाती है। ऐसे ही लोग आज कोविद–19 से प्रभावित हो रहे हैं।

विकट होती कुपोषण की समस्या का एक कारण अधिकतर लोगों द्वारा केवल अनाज खाकर पेट भर लेना है। इस कारण भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी रह जाती है। ऐसे में खाद्यान्न की गुणवक्ता सुधारने तथा आवश्यक विटामिन, प्रोटीन व खनिजों की पूर्ति करने वाली फसलों व प्रजातियों की उपज बढ़ाने के लिए क्षेत्रीय आधार पर चावल, हल्दी, अदरक एवं सूरन की खेती, जायद में मूंग की उन्नत खेती, दुधारू पशुओं का पोषण प्रबंधन, फलदार वृक्षों में सामायिक प्रबंधन, जायद की सब्जियों में कीट एवं रोग प्रबंधन, बेबीकार्न/मक्का की वैज्ञानिक खेती, फसल अवशेष प्रबंधन एवं मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन विषय पर लेख प्रकासित किया जा रहा है। जो प्रोटीन, लौह तत्व, जिंक, रेशा व विटामिन से भरपूर हो, की बुवाई को प्रोत्साहित करने हेतु आम जनता में इन पोषक तत्वों से समृद्ध प्रजातियों के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं।

**(ए.पी. राव)**

# धान की उपयुक्त प्रजातियॉ एवं नर्सरी प्रबन्ध

आर0आर0 सिंह, अशोक कुमार सिंह, सौरभ वर्मा एवं आर0एल0 सिंह*

खरीफ फसलों में धान उत्तर प्रदेश की प्रमुख फसल है। इसको ध्यान में रखते हुए हमारे विश्वविद्यालय ने हर परिस्थितियों के अनुकूल प्रजातियों का विकासा किया है जिसके फलस्वरूप चावल की औसत उपज में बृद्धि हो रही है। अभी भी विश्वविद्यालय द्वारा विकसित तकनीकियों के माध्यम से उत्पादकता बढ़ाने की सम्भावना है। यह तभी हो सकता है जब वैज्ञानिक विधियों को ठीक प्रकार से अपनाया जाय। धान की अधिक पैदावार प्राप्त करने हेतु निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

1. क्षेत्रीय जलवायु, मिट्टी, सिंचाई के साधन, जल भराव, ऊसर का प्रभाव, सूखे की दशा तथा बुआई एवं रोपाई की अनुकूलता के अनुसार ही धान की संस्तुत प्रजातियों का चयन करें।
2. शुद्ध प्रमाणित एवं शोधित बीज ही बोयें।
3. मृदा परीक्षण के आधार पर संस्तुत उर्वरकों, हरी खाद एवं जैविक खाद का समय से प्रयोग करें।
4. उपलब्ध सिंचन क्षमता का पूरा उपयोग कर समय से बुआई/रोपाई सुनिश्चित करें।
5. प्रति इकाई क्षेत्रफल में पौधों की संख्या सुनिश्चित करें।
6. कीट–रोग एवं खर–पतवार नियन्त्रण करें।

## भूमि की तैयारी

गर्मी की गहरी जुताई के बाद 2–3 जुताइयॉ करके खेत की तैयारी के साथ आवश्यक मेंडबन्दी करनी चाहिए ताकि खेत में वर्षा का पानी अधिक समय तक संचित किया जा सके। यदि हरी खाद के रूप में ढैचा/सनई की फसल लेनी हो तो उसकी बुआई 45–50 दिन रोपाई के पूर्व कर देनी चाहिए। हरी खाद हेतु फसल की बुआई के 20–25 दिन बाद सिंचाई के समय ही खेत की तैयारी करके समय से नर्सरी डाल दें जिससे हरी खाद की पलटाई के बाद तुरन्त रोपाई कर सकें। धान की बुआई/रोपाई के एक सप्ताह पूर्व खेत की सिंचाई कर दें जिससे खर–पतवार उग आवें तत्पश्चात बुआई/रोपाई के समय खेत में पानी भरकर खेत की जुताई कर दें।

## प्रजातियों का चयन

उत्तरी पूर्वी मैदानी क्षेत्र, पूर्वी मैदानी क्षेत्र एव विन्ध्यन क्षेत्र के लिए विश्वविद्यालय द्वारा विकसित एवं परीक्षण की गयी निम्न प्रजातियों का चयन परिस्थिति के अनुसार करें।

## उर्वरकों का संतुलित प्रयोग एवं विधि

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना उपयुक्त है। यदि किसी कारणवश मृदा का परीक्षण न हुआ हो तो सिंचित दशा में शीघ्र पकने वाली सुगन्धित प्रजातियों में 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश तथा मध्यम देर से पकने वाली प्रजातियों में 150 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश तत्व के रूप में प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। नत्रजन की आधी मात्रा, फास्फोरस एवं

**1. असिंचित दशा एवं शीघ्र पकने वाली :–**

| प्रजाति | अधिसूचना की तिथि | पकने की अवधि | उपज (कु./हे.) | धान का प्रकार | चावल निकासी प्रतिशत | रोग रोधिता प्रजाति वि ोशता | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| नरेन्द्र–97 | 05.11.92 | 85–90 | 40–45 | महीन, लम्बा | 70 | – | असिंचित तथा सिंचित उपरहर क्षेत्रों के लिए संस्तुत |
| नरेन्द्र–118 | 05.05.88 | 85–90 | 45–50 | महीन, लम्बा | 65–70 | – | असिंचित तथा सिंचित उपरहर क्षेत्रों के लिए संस्तुत |
| वरानी दीप | 2003 | 95–100 | 45–50 | महीन, लम्बा | – | – | असिंचित तथा सिंचित उपरहर क्षेत्रों के लिए संस्तुत |
| शुश्क सम्राट | 2005 | 100–105 | 35–40 | महीन, लम्बा | – | – | असिंचित तथा सिंचित उपरहर क्षेत्रों के लिए संस्तुत |
| **2. सिंचित दशा एवं भीघ्र पकने वाली :–** | | | | | | | |
| नरेन्द्र–80 | 08.03.87 | 110–120 | 50–60 | महीन, लम्बा | 65–70 | झोंका रोग | पूर्वी उ0प्र0 उपरहर क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| पन्त धान–12 | 01.01.96 | 115–122 | 50–60 | महीन, लम्बा | 70–72 | जीवाणु झुलसा एवं भूरा घब्बा | उत्तरी पूर्वी, पूर्वी मैदानी एवं विन्ध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| नरेन्द्र–1 | 1981 | 100–105 | 40–45 | – | – | | उत्तरी पूर्वी, मैदानी एवं उपरहर क्षेत्र के |

*सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय, कोटवा, आजमगढ़, उ.प्र.

| | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | | | | | लिए संस्तुत |
| **3. मध्यम अवधि में पकने वाली :–** | | | | | | | |
| सरजू–52 | 14.01.82 | 130–135 | 50–60 | लम्बा | 70 | शुक्राणु झुलसा | सम्पूर्ण मैदानी एवं विन्ध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| पन्त धान–4 | 04.09.85 | 125–130 | 50–60 | महीन लम्बा | 70 | शुक्राणु झुलसा | 10 सेमी जलभराव की दशा में उत्तरी पूर्वी, पूर्वी मैदानी एवं विन्ध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| नरेन्द्र–359 | 02.09.94 | 130–135 | 60–65 | लम्बा मोटा | 72 | शुक्राणु झुलसा | सभी कल्लों में लम्बी बाली उत्तरी पूर्वी, पूर्वी मैदानी एवं विन्ध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| एन.डी.आर. 2065 | 2010 | 120–125 | 50–55 | लम्बा मोटा | – | – | सम्पूर्ण मैदानी एवं विन्ध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| **4. विलम्ब से पकने वाली** | | | | | | | |
| एम.टी.यू.–7029 (स्वर्णा महसूरी) | 09.04.85 | 160–165 | 65–70 | छोटा | 75 | – | वौनी उथल जलभराव वाले क्षेत्रों हेतु उपयुक्त |
| स्वर्णा सब–1 (उन्नत स्वर्णा) | 2009 | 155–160 | 60–70 | छोटा | 75 | – | वौनी उथल जलभराव वाले क्षेत्रों हेतु उपयुक्त |
| **5. सुगधित धान प्रजाति** | | | | | | | |
| टाइप–3 | – | 130–135 | 30–35 | महीन लम्बा | 66 | – | उत्तरी पूर्वी, पूर्वी मैदानी एवं विन्ध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| पूसा बासमती–1 | 6.11.89 | 125–130 | 35–45 | महीन लम्बा | 68 | – | उत्तरी पूर्वी, पूर्वी मैदानी एवं विन्ध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत |
| बसमती 370 | – | 135 | 22–25 | लम्बा पतला | – | – | सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के लिए उपयुक्त |
| कस्तूरी | 6.11.89 | 115–125 | 30–40 | महीन लम्बा | 67 | जीवाणु झुलसा एवं झोका रोग | सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के लिए उपयुक्त |
| लालमती | 2007 | 115–120 | 30–35 | महीन लम्बा | 70 | – | सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के लिए उपयुक्त |
| **6. ऊसर धान प्रजाति** | | | | | | | |
| ऊसर धान–1 लकडा (टा.–22ए) | 24.07.85 | 140–145 | 45–50 | छोटा मोटा | 70 | – | ऊसर भूमि के लिए उपयुक्त |
| नरेन्द्र ऊसर धान–2 | 15.05.98 | 125–130 | 45–50 | लम्बा गोल | 50–62 | भूरा धब्बा तथा शुक्राणु झुलसा | ऊसर भूमि के लिए उपयुक्त |
| नरेन्द्र ऊसर धान–3 | 1999 | 125–130 | 45–50 | लम्बा | 62 | भूरा धब्बा तथा शुक्राणु झुलसा | ऊसर भूमि के लिए उपयुक्त |
| सी0आर0 एस0–10 | 05.11.89 | 115–120 | 50–60 | छोटा मोटा | – | – | ऊसर भूमि के लिए उपयुक्त |
| सी0आर0 एस0–13 | – | 110–115 | 50–60 | पतला लम्बा | 60 | – | ऊसर भूमि के लिए उपयुक्त |
| **7. निचले जलभराव तथा बाढग्रस्त क्षेत्रों के लिए** | | | | | | | |
| 100 सेमी से कम जल भराव के क्षेत्रों के लिए | | | | | | | |
| जल लहरी | 1993 | 135–145 | 40–45 | लम्बा | 65 | जीवाणु झुलसा | 30 सेमी तक के जल भराव के लिए उपयुक्त |
| एन.डी.आर. –8002 | 2004 | 135–140 | 40–45 | लम्बा सुडौल | – | पर्ण धब्बा भूरा एवं सफेद फुदका | 30 सेमी तक के जल भराव के लिए उपयुक्त |
| 100 सेमी से अधिक जल भराव के क्षेत्रों के लिए | | | | | | | |
| जल प्रिया | 04.05.95 | 150–160 | 30–35 | लम्बा सुडौल | 75 | रोगों से आंशिक एवं पूर्णरूप से अवरोधी | अर्ध गहरा जलभराव 50–100 सेमी तक उपयुक्त |
| जल निधि | 02.09.94 | 170–200 | 35–40 | मध्यम सुडौल | 65–70 | विभिन्न रोंगों के प्रति अवरोधी | पौधा काफी लम्बा पानी के साथ कमल की तरह बढ़ता है |
| जल मग्न | 19.12.78 | 150–200 | 35–40 | छोटा मोटा | 65–67 | – | 120 सेमी से अधिक जल भराव वाले क्षेत्र के लिए उपयुक्त |
| **बाढ वाले क्षेत्रों के लिए** | | | | | | | |
| बाढ अवरोधी | 09.09.97 | 145–155 | 35–40 | – | – | – | सामयिक बाढ वाले क्षेत्र हेतु |
| जल पुष्प | 2008 | 113 | 42–47 | मोटा | 70 | – | सिंचित तथा निचली भूमि में जल भराव वाले क्षेत्र हेतु उपयुक्त |
| नरेन्द्र नारायणी | 2008 | 115 | 43–45 | – | – | – | जल भराव एवं सूखा सहनशक्ति बाढग्रस्त क्षेत्रों के लिए उपयुक्त |

पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के पूर्व तथा नत्रजन की शेष मात्रा को बराबर–बराबर दो बार में कल्ले फूटते समय तथा बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था (गर्भावस्था) पर प्रयोग करें।

## सीधी बुआई / ड्रम सीडर से सीधी बुआई

इस दशा में 100–120 कि.ग्रा. नत्रजन, 50–60 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 50–60 कि.ग्रा. पोटाश तत्व के रूप में प्रति हे0 की दर से प्रयोग करें। नत्रजन का एक चौथाई भाग तथा फास्फोरस, पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय प्रयोग करें, शेष नत्रजन का दो चौथाई भग कल्ले फूटते समय तथा शेष एक चौथाई भाग बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था (गर्भावस्था) पर प्रयोग करें। ऊसरीले क्षेत्र में हरी खाद के लिए ढैचे की बुआई करना विशेष रूप से लाभप्रद होता है। ऊसर भूमि में जिप्सम की मॉग के अनुसार अथवा 2 कु0 / हे0 जिप्सम का प्रयोग बेसल ड्रेसिंग के रूप में किया जा सकता है। इससे धान की फसल को गन्धक की आवश्यकता की पूर्ति होती है। सिंगल सुपर फास्फेट के प्रयोग से भी गन्धक की पूर्ति की जा सकती है। पोटाश का प्रयोग हल्की दोमट भूमि में यूरिया के साथ उसकी आधी मात्रा बेसल ड्रेसिंग में शेष मात्रा टापड्रेसिंग में प्रयोग किया जाना उचित रहता है। जल भराव की दशा में उर्वरकों की पूरी मात्रा बुआई के समय दें अथवा जल निकास की यदि सुबिधा हो तो पानी निकालकर टापड्रेसिंग करें अन्यथा शतप्रतिशत यूरिया घोल का पर्णीय छिडकाव कल्ले निकलते समय तथा बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था पर करें अथवा यूरिया को उसकी दुगनी मिट्टी में एक चौथाई गोबर की खाद के साथ मिलाकर 24 घंटे तक रखें जिससे यूरिया अमोनियम कार्बोनेट के रूप में बदल जाय और नत्रजन का रिसाव द्वारा नुकसान कम हो। इस कार्य के लिए 15 प्रतिशत नीम की खली या अन्य नीम उत्पाद के साथ भी यूरिया को लोपित करके प्रयोग करने से नत्रजनीकरण की क्रिया मन्द पड जाती है।

## नोट

लगातार धान–गेहूँ वाले क्षेत्रों में गेंहूँ के बाद हरी खाद, 10–12 टन / हेक्टेयर गोबर या कम्पोस्ट खाद का प्रयोग करें।

जायद में मूँग की खेती करने से 15 कि.ग्रा. नत्रजन की बचत होती है इसी प्रकार हरी खाद (सनई अथवा ढैचा) से लगभग 40–60 कि.ग्रा. नत्रजन की बचत होती है। अतः इस दशा में नत्रजन उर्वरक तदनुसार प्रयोग करें इससे मृदा का भौतिक सुधार भी होता है।

## बीज शोधन

धान बीज बोने अथवा नर्सरी डालने के पूर्व बीज शोधन अवश्य करलें। इसके लिए जहॉ जीवाणु झुलसा रोग

**बीज दर –**

| विधि | बीज दर किग्रा0 / हे0 | | | |
|---|---|---|---|---|
| | महीन बीज | मध्यम बीज | मोटा बीज | संकर बीज |
| सीधी बुआई 20 सेमी लाइन से या जीरो टिलेज या ड्रमसीडर से | 30 | 40 | 50 | 20 |
| सीधी बुआई छिटकवॉ | 80 | 90 | 100 | – |
| चावल सघनीकरण प्रणाली | 4 | 5 | – | 5 |
| रोपाई विधि | 30 | 40 | 50 | 15 |

समस्या हो वहॉ पर 25 किग्रा. बीज के लिए 4 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइकिलीन या 40 ग्राम प्लान्टोमाइसीन को पानी में मिलाकर रातभर भिगों दें, दूसरे दिन शुक्राणु झुलसा के नियन्त्रण हेतु अतिरिक्त पानी निकल जाने के बाद 75 ग्राम थीरम या 50 ग्राम कार्बेन्डाजिम को 8–10 ली0 पानी में घोलकर बीज में मिला दिया जाये। इसके बाद छाया में अंकुरित करके नर्सरी में डाली जाय या ड्रमसीडर में भरकर सीधी बुआई की जाय।

## नर्सरी प्रबन्ध

सबसे पहले पौधशाला की अच्छी तरह से जुताई करके खेत समतल कर लें। एक हेक्टेअर क्षेत्रफल में धान रोपने हेतु 700–800 वर्गमीटर क्षेत्रफल की नर्सरी पर्याप्त होती है तथा एक हेक्टेअर नर्सरी से लगभग 15 हेक्टेअर क्षेत्रफल की रोपाई होती है। नर्सरी में 100 किग्रा. नत्रजन तथा 50 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेअर की दर से प्रयोग करें। समय से नर्सरी बुआई के 10–14 दिन बाद एक सुरक्षात्मक छिडकाव रोगों एवं कीटों के बचाव हेतु करें। खैरा रोग के लिए 5 किग्रा. जिंक सल्फेट 20 किग्रा. यूरिया या 2.5 किग्रा. बुझे हुए चूने के पानी में 1000 ली. का घोल बनाकर पर्णीय छिडकाव करें। सफेदा रोग नियन्त्रण हेतु 5 किग्रा. फेरस सल्फेट 20 किग्रा. यूरिया घोलकर 1000 ली0 का छिडकाव करना चाहिए। भूरे धब्बे रोग से बचने के लिए 2 किग्रा. जिंक मैगनीज कार्बामेट का प्रति हेक्टेअर की दर से छिडकाव करें। नर्सरी में लगने वाले कीटों से बचाव हेतु एक लीटर फेनिट्रोथियान 50 ई.सी. या 1025 लीटर क्यूनालफास 25 ई.सी. या 1.5 लीटर क्लोरोपाइरीफास 20 ई.सी. प्रति हेक्टेअर की दर से छिडकाव करें। नर्सरी में पानी का तापक्रम बढने पर उसे निकालकर पुनः पानी देना सुनिश्चित करें।

## चावल सघनीकरण प्रणाली (एस0आर0आई0) हेतु नर्सरी प्रबन्ध

इस प्रणाली को अपनाने से लगभग 20–25 प्रतिशत पानी की बचत 70–80 प्रतिशत बीज की बचत एवं 20–45 प्रतिशत उपज में वृद्धि सम्भव हो सकी है। इस विधि में मात्र 5 किग्रा. / हे. बीज की आवश्यकता पडती है। इसकी

नर्सरी के लिए दो भाग मिट्टी, एक भाग गोबर की खाद मिलाकर मिश्रण तैयार कर लिया जाता है। एक मीटर जमीन को पीटकर सख्त बना लें या पालीथीन सीट या जूट 3 मीटर लम्बाई में बिछाकर उसके ऊपर बालू या रेत की एक पर्त लगाकर उसके ऊपर 5–6 सेमी. ऊँचा मिट्टी का मिश्रण फैला देते है। तदपुररान्त बीजशोधन के बाद अंकुरित बीजों को इस तरह बिखेरते हैं कि प्रत्येक बीज आपस में लगभग 1 सेमी दूरी पर रहे, इसको हल्की मिट्टी से ढकने के बाद हजारे से फुहार के रूप में हल्का पानी का छिडकाव कर पुआल या अन्य उपलब्ध मल्चिंग अवयव से ढक देते है। इस विधि द्वारा 100 वर्गमीटर नर्सरी से 1 हेक्टेअर क्षेत्रफल की रोपाई की जा सकती है।

अच्छी तरह से तैयार खेत जो पूर्णतः समतल हो जिसपर रस्सी या मार्कर से 25 गुणा 25 सेमी. पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की दूरी पर 8–12 की नर्सरी की एक पौध प्रति हिल रोपाई करते है तथा रोपाई के 10 दिन के अन्तराल पर कम से कम 4 बार कोनोबीडर अवश्य चलावें। इस विधि में जहॉ तक सम्भव हो हरी खाद एवं जीवांशिक खादों का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिए तथा आवश्यकतानुसार नमी बनायें रखें। लगातार पानी भरें रखने की आवश्यकता नही होती है। कोनोबीडर चलाते समय हल्का पानी अवश्य रखें।

## ड्रम सीडर से सीधी बुआई

बीज शोधन के बाद अंकुरित बीज को ड्रमसीडर में तीन चौथाई भाग भरकर लेव किये खेत में लाइन से चलाकर 20 सेमी. लाइन से लाइन की दूरी पर बीज गिराते है। इसमें बीज का अंकुरण दिखने लगे तभी बुआई करनी चाहिए बिलम्ब करने पर बीज के ड्रम से गिरने में समस्या हाती है। खेत में ज्यादा पानी नही होना चाहिए। बीज बुआई के दूसरे या तीसरे दिन बाद उसमें ढैंचा की बुआई कर देने से खर–पतवार की समस्या नही रहती तथा 28–30 दिन की अवस्था पर ढैंचे में 625 ग्राम 2–4 डी सोडियम साल्ट का घोल बनाकर पर्णीय छिडकाव करने से ढैंचे की फसल जलकर भूरी खाद के रूप में परिणित हो जाती है। इससे मृदा का स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है तथा उपज पर अच्छा प्रभाव देखा गया है। खर–पतवार की खडी फसल में समस्या होने पर 200 मिली. नामिनी गोल्ड सोडियम/हेक्टेयर की दर से 15–20 दिन पर छिडकाव करना चाहिए।

## उचित दूरी व गहराई पर रोपाई

खेत की पानी भरकर जुताई (लेव लगाकर) करके पाटा देने के बाद बौनी प्रजातियों की पौध की रोपाई 3–4 सेमी. से अधिक गहराई पर नही करना चाहिए अन्यथा कल्ले कम निकलते है और उपज कम हो जाती है। साधारण उर्वर भूमि में पंक्तियों व पौधों की दूरी 20 गुणा 10 सेमी., उर्वर भूमि में 20 गुणा 15 सेमी. रखें। एक स्थान पर 2–3 पौध लगाने चाहिए। यदि रोपाई में देर हो जाय तो एक स्थान पर 3–4 पौध लगाना उचित होगा। साथ ही पंक्तियों से पंक्तियों की दूरी 5 सेमी कम कर देनी चाहिए।

## धान की रोपाई में पैडी ट्रान्सप्लान्टर का प्रयोग

हस्तचालित पैडी ट्रान्सप्लान्टर छः लाइन वाली तथा शक्ति चालित 8 लाइन वाली धान रोपाई की मशीन है। इस यन्त्र से रोपाई हेतु मैट टाइप नर्सरी की आवश्यकता होती है। इस नर्सरी में धान का अंकुरित बीज प्रयोग किया जाता है। इस मशीन द्वारा कतार की दूरी 20 सेमी. निश्चित है अतः 20 गुणा 10 सेमी. दूरी पर रोपाई हेतु 50 किग्रा. प्रति हेक्टेअर बीज की आवश्यकता होती है। धान बीजशोधन के बाद 2 या 3 दिन अथवा ठीक से अंकुरण होने तक बोरे की चट से ढककर रखना चाहिए तथा बोरे पर अंकुर निकलने के समय तक पानी छिडकते रहें। अंकुर फूटने पर बीज नर्सरी में बोने के लिए तैयार समझना चाहिए।

## मैट टाइप नर्सरी उगाना

मैट टाइप धान की नर्सरी उगाने के लिए 5–6 सेमी. गहराई तक की खेत की ऊपरी सतह की मिट्टी एकत्र कर लेते है। इसे बारीक कूटकर छलने से छान लेते हैं। जिस क्षेत्र में नर्सरी डालनी है उसमें अच्छी प्रकार पडलिंग करके पाटा कर दें। तत्पश्चात खेत का पानी निकाल दें और एक या दो दिन तक सूखने दें जिससे सतह पर पतली परत बन जाय। अब इस क्षेत्र पर एक मीटर चौडाई में आवश्यकतानुसार लम्बाई तक लकडी की पट्टियॉ लगाकर मिट्टी की 2 से 3 सेमी. ऊॅची मेंड बनायें और इसमें नर्सरी हेतु तैयार छनी हुई मिट्टी को 1 सेमी. ऊँचाई तक समतल करदें तथा इसके ऊपर अंकुरित बीज 800 से 1000 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से छिडक दें। तत्काल नर्सरी को पुआल/घास से ढक दें। 4–5 दिन तक पानी का छिडकाव करते रहें। 15 दिन बाद पौध रोपाई हेतु स्क्रैपर की सहायता से (20–50 सेमी. के टुकडों में) इस प्रकार निकाली जाय कि छनी हुई मिट्टी की मोटाई तक का हिस्सा उठकर आये। इन टुकडों को पैडीट्रान्सप्लान्टर की ट्रे में रख दें। मशीन में लगे हत्थे को जमीन की ओर हल्के झटके के साथ दबायें। ऐसा करने से ट्रे में रखी पौध की स्लाइस 6 पिकर काटकर 6 स्थानों पर खेत में लगा दें फिर हत्थे को अपनी ओर खीचकर पीछे की ओर कदम 10 सेमी बढाकर मशीन को पुनः हत्थे से दबायें। इस प्रकार पूरे खेत में यही क्रिया दोहराते हुए पूरे खेत की रोपाई कम समय में कर सकते है।●

# फसल अवशेष के इन-सीटू प्रबन्ध हेतु कृषि मशीनीकरणः

–डॉ0 के0एम0 सिंह, डॉ0 सियाराम, डॉ0 एल0सी0 वर्मा, डॉ0 एस0एन0 सिंह एवं डॉ0 आर0के0 सिंह*

दक्षिण–पूर्व एशिया धान की फसल का मुख्य स्थान है, और इस उप महाद्वीप मे धान और गेहूँ में क्रमशः 59. 16 और 42.55 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल आच्छादित होता है तथा वार्षिक अनाज उत्पादन क्रमशः 181.35 व 109.07 मिलियन टन है। धान– गेहूँ प्रणली क्रमशः 10. 0, 2.2, 0.8 तथा 0.5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल के साथ धान– गेहूँ कंसोटियम देशों (भारत, पाकिस्तान, बांग्ला देश और नेपाल) में कुल 13.5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल है। भारत में गंगा के मैदानो के उत्तर–पश्चिम हिस्सों में धान क्षेत्र का 75 प्रतिशत से अधिक भाग की यांत्रिक रुप से कटाई की जाती है। फसल की कटाई और मड़ाई के उपरान्त मैदान में छोडे गए पौधो के कुछ हिस्सों मे फसल अवशेष के रुप मे रह जाता है। इन सामग्रियों को अपशिष्ट पदार्थों के रुप में माना जाता रहा है जिन्हे निपटान की आवश्यकता होती थी, लेकिन यह महसूस किया गया कि यह महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसााधन है और अपशिष्ट नहीं है बल्कि फसल अवशेषों के पुनःचक्रण को फसलो की पोषक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए फार्म अपशिष्ट को उपयोगी उत्पाद मे परिवर्तित करने की आवश्यकता है। यह मिट्टी की भौतिक व रासायनिक स्थिति को बनाए रखता है और फसल उत्पादन प्रणाली के समग्र पारिस्थितिक संतुलन में सुधार करता है।

## सम्भावित फसल अवशेष

धान–गेहूँ प्रणाली के बढते देशों में बडी मात्रा में धान–गेहूँ अवशेष का उत्पादन होता है। इसके अलावा, मशीनीकृत खेती को अपनाने के परिणामस्वरुप अनाज की कटाई के बाद मैदान मे धान–गेहूँ के पुआल/भूसे का एक बडा हिस्सा खेतों मे छोड दिया जाता है। अधिकांश किसान जानवरों को खिलाने के लिए गेहूँ के भूसे को हटाते हैं। धान के पुआल का प्रबन्ध एक बडी चुनौती है क्योंकि इसे उच्च सिलिका सामग्री के कारण जानवरों को खिलाने के लिए एक निम्न कोटि का पशुआहार मानते हैं। ढीले धान के अवशेषों के रहते गेहूँ लगाते समय सीडड्रील संचालन में असुविधा होती है परिणामस्वरुप किसान फसल अवशेषों को जलाने का सहारा लेते हैं। फसल अवशेष जलाने से मृदा ताप में वृद्धि, निकलने वाले धुएं की जहरीली गैसों से विभिन्न प्रकार के रोग व धुंध के कारण होने वाले दुर्धटना के साथ पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पडता है। फसलों के जड, तना व पत्तियों में संचित पोषक तत्वों व मित्र कीटों की छति होती है। इससे अगल–बगल के खेतों तथा आवादी में आग लगने की संभावना रहती है। इससे न केवल विशाल बायोमास के नुकसान का कारण बनता है बल्कि पर्यावरणीय प्रदूषण का कारण बनता है। फसल

**सारणी–1**

**धान– गेहूँ फसल अवशेषों की उपलब्धता एवं उनमें पोषक तत्वों का स्तर (मिलियन टन)**

| प्रदेश | फसल अवशेष उपलब्धता(मि0टन) | | | पुनःचकण | पोशक तत्व(यन0पी0के0) सामर्थ्य | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | धान | गेहूँ | कुल | हेतु अवशेष उपलब्धता | कुल | सापेक्ष पुनःचकण हेतु उपलब्धता | रासायनिक प्रतिस्थापन मान |
| पंजाब | 10.0 | 18.2 | 28.2 | 9.40 | 0.462 | 0.154 | 0.077 |
| हरियाणा | 2.5 | 9.7 | 12.2 | 4.07 | 0.194 | 0.065 | 0.032 |
| उ0 प्रदेश | 14.0 | 27.5 | 41.5 | 13.83 | 0.677 | 0.226 | 0.113 |
| बिहार | 9.6 | 5.3 | 14.9 | 4.97 | 0.257 | 0.086 | 0.043 |
| प0 बंगाल | 16.7 | 0.1 | 16.8 | 5.60 | 0.308 | 0.103 | 0.051 |
| कुल | 52.8 | 60.8 | 113.6 | 37.87 | 1.898 | 0.634 | 0.316 |

स्रोतः सरकार,1999

*सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय, कोटवा, आजमगढ़, उ.प्र.

उत्पादन प्रणालियों में इन अवशेषों को रिसाइक्लिंग करने की भारी सम्भावना है। भारतवर्ष में उत्पादित फसल अवशेष की कुल मात्रा का 27 प्रतिशत गेहूँ अवशेष तथा धान का लगभग 51 प्रतिशत है। इन अवशेषों का 1/3 भाग जानवरों को खिलाने व अन्य प्रयोजन के लिए उपयोग किया जाता है। फसल अवशेष प्रबंधन एकीकृत पोषक तत्व प्रबंध का मुख्य घटक है इससे फसल अवशेषों मे विद्यमान पोषक तत्व व कार्बनिक पदार्थ आगामी फसलों की पोषण आवश्यकता की पूर्ती के साथ सूक्ष्म जीवाणुओं के बढने का वातावरण भी तैयार करते है। मृदा मे वायु संचार व जल धारण क्षमता मे वृद्धि के साथ यह मिट्टी की भौतिक व रासायनिक स्थिति को बनाए रखते हुए पर्यावरण को संरक्षित एवं सुरक्षित रखने में सहयोग प्रदान करता है। फसल अवशेषों की उपलब्धता एवं उनमें पोषक तत्वों का स्तर सारणी–1 में दर्शाया गया है।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि केवल धान–गेहूँ से कुल 113.6 मिलियन टन फसल अवशेषों की उपलब्धता मे से 37.87 मिलियन टन फसल अवशेष अपशिष्ट पदार्थों के रुप में जला दिया जाता है यदि उन्हे इन–सीटू अवशेश प्रबन्ध कर लिया जाय तो उनमें 1.898 मिलियन टन पोषक तत्वों का उपयोग कर उर्बरक पर होने वाले खर्च को बचाकर अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

**फसल अवशेष रिसाइक्लिंग व मृदा स्वास्थ्यः**

औसतन प्रतिवर्ष 600 से 700 मिलियन टन फसल उत्पादन होता है जिसका एक चौथाई भाग धान–गेहूँ से प्राप्त होता है। धान–गेहूँ प्रणाली में10 टन/हेक्टेयर जैवभार उत्पादन हेतु लगभग 500 किलोग्राम पोषक तत्व मृदा से अवशोषित करती है। फसल द्वारा मृदा से अवशोषित पोषक तत्व का 25 प्रतिशत नत्रजन व फास्फोरस, 50 प्रतिशत सल्फर एवं 75 प्रतिशत पोटाश जड़, तना व पत्ती में समग्रहीत होता है। यदि हम एक टन धान अवशेष का दहन करते हैं तो 5.5 किलोग्राम नत्रजन, 2.3 किलोग्राम फास्फोरस, 25 किलोग्राम पोटाश , 1.2 किलोग्राम सल्फर एवं 400 किलोग्राम कार्बनिक पदार्थ का ह्रास होता है। विभिन्न फसल अवशेषों मे अवशोषित पोषक तत्व की उपलब्धता के अनुसार अपघटन के बाद मिट्टी में उपलब्धता बढ़ती है।

उपरोक्त तालिका को देखकर हम स्पष्ट रुप से अनुमान लगा सकते हैं कि कितनी अधिक मात्रा में मिट्टी के आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति फसलों के विभिन्न अवशेषो को इन–सीटू व एक्स–सीटू प्रबन्ध करके कर सकते है। विदेशों मे जहां अधिकतर मशीनो से खेती की जाती है तथा जहां पर पशुओं पर निर्भरता नही के बराबर है वहां पर फसल के अवशेषों को

**सारणी–2**
**फसलों के विभिन्न अवशेषों में नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश तत्वों की मात्रा**

| फसल अवशेष | नत्रजन प्रतिशत | फास्फोरस प्रतिशत | पोटाश प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| गेहूँ का भूसा | 0.53 | 0.10 | 1.10 |
| जौ का भूसा | 0.57 | 0.26 | 1.20 |
| गन्ने की पत्तियां | 0.35 | 0.10 | 0.60 |
| गन्ने की खोई | 2.25 | 0.12 | – |
| धान का पुआल | 0.36 | 0.08 | 0.70 |
| धान की भूसी | 0.40 | 0.25 | 0.40 |
| राई/सरसो का तना | 0.57 | 0.28 | 1.40 |
| मक्का की कडवी | 0.47 | 0.57 | 1.65 |
| बाजरे की कडवी | 0.65 | 0.75 | 2.50 |
| मूंगफली का छिलका | 0.70 | 0.48 | 1.40 |
| आलू | 0.52 | 0.09 | 0.85 |
| मटर की सूखी पत्तियॉ | 0.35 | 0.12 | 0.36 |
| करंज की सूखी पत्तियॉ | 2.65 | 0.41 | 2.42 |
| वृक्षों की सूखी पत्तियॉ | 1.50 | 0.45 | 2.50 |

बारीक टुकडों में काटकर मिट्टी में मिला दिया जाता है। वर्तमान में हमारे देश मे भी इस कार्य के लिये रोटावेटर जैसी मशीन का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है, जिससे खेत को तैयार करते समय एक बार मे ही फसल के अवशेषों को बारीक टुकडों में काटकर मिट्टी में मिलाना काफी आसान हो गया है। जिन क्षेत्रों में नमी की कमी हो वहां पर फसल अवशेषों को मल्च के रुप में प्रयोग करने से मृदा जल संरक्षण के साथ साथ खरपतवारों से बचा सकते हैं तथा अवशेषों को एक्स–सीटू प्रबन्धन के तहत कम्पोस्ट खाद तैयार कर खेत में डालना भी लाभप्रद होता है।

**फसल अवशेष का मृदा में अपघटनः**

मृदा में फसल अवशेष का अपघटन विभिन्न प्रकार के लाभदायक सूक्ष्म जीवों (फंजाई, Actinobacteria, Gram+Germ-bactria) के द्वारा होता है जो किसी भी फसल अवशेष को मृदा में विघटित करके जैव कार्बन और पोषक तत्वों के रुप में मृदा के उर्वरा शक्ति को बढ़ाते है। लाभदायक सूक्ष्म जीव फसल अवशेषों के अपघटन के लिए मुख्य रुप से भागीदार होते हैं। पौधों के अवशेषों को माइक्रोबियल समुदाय मिट्टी में मिलकर विभिन्न प्रकार की फसल की गुणवत्ता और संरचना को प्रभावित करती है।

**फसल अवशेष का मृदा गुणवत्ता पर प्रभाव :**

फसल अवशेष को मृदा में मिलाने से मृदा के गुणवत्ता पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ता है–

1. मृदा में कार्बनिक कार्बन की वृद्धि होती है।
2. मिट्टी के pH मान ऊसर में सुधार होता है।
3. मृदा की अम्लीयता तथा क्षारीयता में सुधार होता है।
4. मिट्टी में जैव पदार्थों की वृद्धि होती है, जिससे फसल की पैदावार अच्छी होती है।
5. मृदा के घनत्व एवं जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है।
6. फसल अवशेष को मृदा में मिलाने से माइक्रोव का विकास होता है एवं उनकी गतिविधियों में ऊर्जा प्राप्त होती है।
7. फसल अवशेष को मिट्टी में मिलाने से मृदा जल संरक्षण में सुधार और मृदा उर्वरता को बनाए रखता है, जिससे फसल की पैदावार अच्छी होती है।
8. फसल अवशेष को मृदा में मिलाने से सर्दियों में मिट्टी का तापमान बढ़ाया और गर्मी के मौसम में इसे कम किया जा सकता है, जिससे मृदा तापमान समान रहता है।

**फसल अवशेषों को खेत में जलाने से खेतों पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव**

- प्रति एकड़ 400 किग्रा लाभकारी कार्बन जलकर नष्ट हो जाता है।
- नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश व सल्फर के रूप में अति उपयोगी पोषक तत्व जलकर नष्ट हो जाते हैं।
- प्रति ग्राम मिट्टी में उपलब्ध 10 – 40 करोड़ लाभकारी बैक्टीरिया, 1–2 लाख लाभकारी फफूँद नष्ट हो जाते हैं।
- प्रति एकड़ 18 कुन्तल चारा भूसा जलकर नष्ट हो जाता है, जिसकी कीमत वर्तमान में लगभग रू0 25000 होगी।
- जब खेत में आग लगायी जाती है तो खेत की मिट्टी उसी प्रकार जलती है जैसे ईंट भट्ठे की ईट जलती है। खेत का तापमान बढ़ने से उसमें पाये जाने वाले लाभकारी जीव जैसे – सूक्ष्म जीवणु – राइजोबियम, अजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम, ब्लू ग्रीन एल्गी तथा पी.एस.बी. जो भूमि में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते है, सभी जलकर नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त लाभदायक जैविक फफूँदनाशी – ट्राइकोडर्मा, जैविक कीटनाशी– व्युवेरिया बैसियाना, वैसिलस थिरूनजेनसिस तथा किसान का मित्र कहा जाने वाला केचुआ आदि आग के अत्यधिक तापमान से जलकर नष्ट हो जाते हैं। फसल अवशेष को जलाने से निम्न दुष्प्रभाव पड़ते हैं।

**(1) फसल अवशेष जलाने से बढ़ रहा है ग्लोवल वार्मिंग**

अवशेषों के जलने से ग्लोवल वार्मिंग के खतरे को बल

मिलता है।

### (2) ग्रीन हाउस प्रभाव

फसल अवशेष जलाने से ग्रीन हाउस प्रभाव पैदा करने वाली व अन्य हानिकारक गैसों मीथेन, कार्बन मानोआक्साइड, नाइट्रस आक्साइड और नाइट्रोजन के अन्य आक्साइड का उत्सर्जन होता है। इससे पर्यावरण प्रदूषित होता है तथा इसका प्रभाव मानव और पशुओं के अलावा मिट्टी के स्वास्थ्य पर भी पड़ता है।

### (3) मृदा के भौतिक गुणों पर प्रभाव

फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा ताप में वृद्धि होती है, जिसके फलस्वरूप मृदा सतह सख्त हो जाती है एवं मृदा की सघनता में वृद्धि होती है। मृदा जल धारण क्षमता में कमी आती है। जिसके कारण मृदा में वायु संरक्षण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

### (4) मृदा पर्यावरण पर प्रभाव

फसल अवशेषों को जलाने से मृदा में उपस्थित सूक्ष्म जीवों की संख्या पर बुरा प्रभाव पड़ता है और फसल अवशेष जलाये जाने से मिट्टी की सर्वाधिक सक्रिय 15 सेमी तक की परत में सभी प्रकार के लाभदायक सूक्ष्म जीवों का नाश हो जाता है। फसल अपशिष्ट जलाने से केंचुये, मकड़ी जैसे मित्र कीटों की संख्या कम हो जाती है। इससे हानिकारक कीटोंनाशकों का इस्तेमाल करना आवश्यक हो जाता है। इससे खेती की लागत बढ़ जाती है।

### (5) मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की कमी

फसल अवशेषों को जलाने के कारण मिट्टी में पाये जाने वाले पोषक तत्व जैसे–नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश एवं सल्फर नष्ट हो जाते हैं। इससे मिट्टी की उर्वराशक्ति कम हो जाती है। एक टन धान के पुआल को जलाने से 5.5 किग्रा नाइटोजन, 2.3 किग्रा फास्फोरस 25 किग्रा पोटैशियम तथा 1.2 किग्रा सल्फर नष्ट हो जाता है।

### (6) जनवरों के लिये चारे की कमी

फसल अवशेषों को पशुओं के लिये सूखे चारे के रूप में प्रयोग किया जाता है अतः फसल अवशेषों को जलाने से पशुओं को चारे की कमी का सामना करना पड़ता है।

### (7) अग्निकाण्ड होने की संभावना

जहॉ पर कम्बाइन का प्रयोग फसलों के कटाई में करते हैं वहॉ पर फसलों के अवशेष डण्ठल के रूप में खड़े होते हैं एवं उनके जलाने पर नजदीक के किसानों के फसलों में आग लगने की संभावना बनी रहती है, जिससे खड़ी फसल एवं आबादी में अग्निकाण्ड होने की संभावना बनी रहती है। वहीं आस–पास के खेत व खलिहान तथा मकान में भी अग्निकाण्ड के कारण अत्यधिक नुकसान उठाना पड़ता है।

### खेत के अन्दर फसल अवशेष प्रबन्धन (Insitu Management of Crop Residues) –

अगर फसल अवशेष खेत में ही पड़े रहे तो फसल बोने पर जब नई फसल के पौधे छोटे रहते हैं, तो वह पीले पड़ जाते है, क्योंकि उस समय अवशेष के सड़ाव में जीवाणु भूमि की नाइट्रोजन का उपयोग कर लेते हैं, जिस कारण प्रारम्भ में फसल पीली पड़ जाती है। अतः फसल अवशेष का प्रबन्धन करना अत्यन्त आवश्यक है, तभी हम अपनी जमीन में जीवाष्म पदार्थ की मात्रा में वृद्धि कर जमीन को खेती योग्य सुरक्षित रख सकते हैं।

फसल की कटाई के बाद खेत में बचे फसल अवशेष, घास, फूंस, पत्तियाँ व ठूंठ आदि को खेत में प्रबन्धन करने के दृष्टिगत सड़ाने के लिये धान की फसल कटाई उपरान्त उपयुक्त नमीं पर हैप्पी सीडर से बुआई करें या फिर मल्चर, रिवर्ससिवल एम बी प्लाऊ की सहायता से दबाकर सडा दें या फिर जीरो सीडड्रिल अथवा सीडर से बुआई करें। किसान भाई अगली गेहूँ की फसल में प्रथम पानी के 20–25 किग्रा नाइट्रोजन प्रति एकड़ की दर से अधिक छिड़क कर पानी लगाएं। इस प्रकार अवशेष खेत में विघटित होना प्रारम्भ कर देंगे तथा लगभग एक माह में स्वयं सड़कर आगे बोई गई फसल को पोषक तत्व प्रदान कर देंगे। ●

# हल्दी, सूरन व अदरक उत्पादन की उन्नत तकनीक

राजीव कुमार सिंह, अजीत कुमार श्रीवास्तव, सुरेन्द्र प्रताप सोनकर एवं मिथिलेश कुमार पाण्डेय*

हल्दी, सूरन व अदरक एक बहुवर्षीय कन्दीय फसल है। हमारे देश में प्राचीन काल से ही हल्दी, सूरन व अदरक की खेती हो रही है तथा यह अपने औषधीय एवं पोषक गुणों के कारण अपना अलग स्थान रखते हैं। जब हम सूरन की बात करते हैं तो हमें यह जानना होगा कि इसमें मुख्य रूप से प्रोटीन, वसा, खनिज पदार्थ, कैल्शियम व फास्फोरस प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। सूरन का प्रयोग सब्जी, अचार, चटनी, पापड़, आटा, चिप्स और नमकीन आदि के रूप में किया जाता है। सूरन में अनेक औषधीय गुण पाए जाते हैं। बवासीर, पेचिश, तिल्ली के सूजन, रक्त विकार, दमा, वमन , फेफड़े के सूजन और पेटदर्द आदि में औषधि के रूप में सूरन का प्रयोग किया जाता है। यह खुजली और उदर संबंधी विकारों में भी लाभदायक है। अदरक का प्रयोग मसाले, औषधियों तथा सौन्दर्य सामग्री के रूप में हमारे दैनिक जीवन में वैदिक काल से चला आ रहा हैं। खुशबू पैदा करने के लिये आचारो, चाय के अलावा कई व्यजंनो में अदरक का प्रयोग किया जाता है। सर्दियों में खाँसी जुकाम आदि से बचने के लिए किया जाता हैं। अदरक का सोंठ कें रूप में इस्तमाल किया जाता हैं। अदरक का तेल, चूर्ण तथा एग्लिओरजिन भी औषधियो में उपयोग किया जाता हैं। हल्दी का उपयोग हमारे भोजन में प्रतिदिन किया जाता है। इसका उपयोग सभी धार्मिक कार्यों में मुख्य रूप से किया जाता है। हल्दी में काफी औषधीय गुण हैं इसका उपयोग दवा एवं सौन्दर्य प्रसाधनों में भी होता है। हल्दी के निर्यात से भारत को करोड़ो रुपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। इन तीनों फसलों को हल्के छायादार स्थानों में भलीभाँति उगने और विकसित होने की क्षमता के कारण इनकी व्यावसायिक खेती किसानों के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

## उत्पादन तकनीक

### जलवायु

हल्दी, सूरन व अदरक की खेती गर्म और आर्द्रता वाले स्थानों में की जाती है। मध्यम वर्षा बुवाई के समय हल्दी, सूरन व अदरक की गाँठों (राइजोम) के जमाने के लिये आवश्यक होती है। इसके बाद थोड़ी ज्यादा वर्षा पौधों को वृद्धि के लिये तथा इसकी खुदाई के एक माह पूर्व सूखे मौसम की आवश्यकता होती हैं। अगेती वुवाई या रोपण हल्दी, सूरन व अदरक की सफल खेती के लिये अति आवश्यक हैं। 1500–1800 मि.मी.वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी खेती अच्छी उपज के साथ की जा सकती हैं। परन्तु उचित जल निकास रहित स्थानों पर खेती को भारी नुकसान होता हैं। औसत तापमान 25 डिग्री सेन्टीग्रेड, गर्मियों में 35 डिग्रीसेन्टीग्रेड तापमान वाले स्थानो पर इसकी खेती बागों में अन्तरवर्तीय फसल के रूप मे की जा सकती हैं।

### भूमि

हल्दी, सूरन व अदरक की खेती बलुई दोमट जिसमें अधिक मात्रा में जीवांश या कार्बनिक पदार्थ की मात्रा हो वो भूमि सबसे ज्यादा उपयुक्त रहती है। मृदा का पी.एच.मान 6.5 ये 7..5 अच्छे जल निकास वाली भूमि अधिक उपज के लिए बेहतर रहती हैं। एक ही भूमि पर बार–बार फसल लेने से भूमि जनित रोग एवं कीटों में वृद्धि होती हैं। इसलिये फसल चक्र अपनाना चाहिये। उचित जल निकास ना होने से कन्दों का विकास अच्छे से नही होता।

### खेती की तैयारी

मार्च–अप्रैल में खेत की गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद खेत को खुला धूप लगने के लिये छोड़ देते हैं। मई के महीने में डिस्क हैरो या रोटावेटर से जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेते

*सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय, कोटवा, आजमगढ़, उ.प्र.

हैं। अनुशंसित मात्रा में गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट और नीम की खली का समान रूप से खेत में डालकर पुनः कल्टीवेटर या देशी हल से 2–3 बार आड़ी–तिरछी जुताई करके पाटा चला कर खेत को समतल कर लेना चाहिये। सिचाई की सुविधा एवं बोने की विधि के अनुसार तैयार खेत को छोटी–छोटी क्यारियों में बाँट लेना चाहिये। अंतिम जुताई के समय उर्वरकों को अनुशंसित मात्रा का प्रयोग करना चाहिये। शेष उर्वरकों को खड़ी फसल में देने के लिये बचा लेना चाहिये।

## बीज कन्द की मात्रा एवं बीज उपचार

हल्दी व अदरक के कन्दों का चयन बीज हेतु 6–8 माह की अवधि वाली फसल में पौधों को चिन्हित करके काट लेना चाहिये अच्छे कन्द के 2.5–5 सेमी .लम्बे कन्द जिनका वजन 20–25 ग्रम तथा जिनमें कम से कम तीन गाँठे हो प्रवर्धन हेतु चयन कर लेना चाहिये। बीज उपचार मैंकोजेव फफूँदी से करने के बाद ही प्रर्वधन हेतु उपयोग करना चाहिये। हल्दी व अदरक के लिये 20–25 कुंतल कन्द बीज दर उपयुक्त रहता हैं तथा मैदानी भागो में 15 –18 कु प्रति हे0. बीजों की मात्रा का चुनाव किया जा सकता हैं। क्योंकि अदरक की लागत का 40–46 प्रतिशत भाग बीज में लग जाता है इसलिये वीज की मात्रा का चुनाव, प्रजाति, क्षेत्र एवं कन्दों के आकार के अनुसार ही करना चाहिये। सूरन का प्रसारण वानस्पतिक विधि द्वारा किया जाता है, जिसके लिए पूर्ण कन्द या घनकन्द प्रयोग में लाए जाते हैं। कन्दों के माध्यम से प्रसारण करने के लिए प्रत्येक कन्द को 500 ग्राम से 700 ग्राम तक के टुकड़ों में काट लिया जाता है। 500 से 700 ग्राम के पूर्ण कन्दों की उपलब्धता की स्थिति में बुआई करने पर प्रस्फुटन शीघ्र होता है जिसके परिणामस्वरूप अधिक उपज की प्राप्ति होती है। कन्दों को बुआई से पहले 2 प्रतिशत तूतिया के घोल या 0.1 प्रतिशत कैलेकिसन (1 ग्राम प्रति लीटर पानी में ) 10 मिनट तक डुबोकर 24 घन्टे तक छाया में रखकर सुखाने के उपरांत उपयोग में लाना चाहिए ।भारी कन्दों को बुआई के लिए टुकड़ों में काटते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक टुकड़े में कम से कम एक कलिका अवश्य रहे। कन्द से बुआई के लिए टुकड़ो को बनाते समय इस बात का ध्यान रहे कि कन्द का कालर वाला भाग ऊपर होना चाहिए एवं प्रत्येक टुकड़े में कालर का कुछ भाग अवश्य रहे।

## बुवाई का समय

हल्दी, सूरन व अदरक की बुवाई दक्षिण भारत में मानसून फसल के रूप में अप्रैल व मई में की जाती जो दिसम्बर में परिपक्क होती है, जबकि मध्य एवं उत्तर भारत में अदरक एक शुष्क क्षेत्र फसल है। जिसका अप्रैल से जून माह तक वुवाई योग्य समय हैं। सबसे उपयुक्त समय 15 मई से 30 मई हैं। 15 जून के बाद वुवाई करने पर कंद सड़ने लगते हैं और अंकुरण पर प्रभाव बुरा पड़ता हैं। केरल में अप्रैल के प्रथम सप्ताह में वुवाई करने पर उपज 200 प्रतिशत तक अधिक पाई जाती हैं। वहीं सिचाई क्षेत्रों में बुवाई के सबसे उपयुक्त समय फरवरी के मध्य बोने से सबसे अधिक उपज प्राप्त हुई पायी गयी तथा कन्दों के जमाव में 80 प्रतिशत की वृद्धि आँकी गयी। पहाड़ी क्षेत्रो में 15 मार्चके आस–पास वुवाई की जाने वाली अदरक में सबसे अच्छा उत्पादन प्राप्त होता है।

## बीज कन्द की मात्रा एवं बीज उपचार

हल्दी, सूरन व अदरक का प्रसारण वानस्पतिक विधि द्वारा किया जाता है, जिसके लिए पूर्ण कन्द या घनकन्द प्रयोग में लाए जाते हैं। कन्द बीजों को खेत में वुबाई, रोपण एवं भण्डारण के समय उपचारित करना आवश्यक हैं। बीज उपचारित करने के लिये (मैंकोजेब .मैटालैक्जिल) या कार्बोन्डाजिम की 3 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर के पानी के हिसाब से घोल बनाकर कन्दों को 30 मिनट तक डुवो कर रखना चाहिये। साथ ही स्ट्रप्टोसाइकिलन/प्लान्टो माइसिन भी 5 ग्राम की मात्रा 20 लीटर पानी के हिसाब से मिला लेते है जिससे जीवाणु जनित रोगों की रोकथाम की जा सके। पानी की मात्रा घोल में उपचारित करते समय कम होने पर उसी अनुपात में मिलाते जाय और फिर से दवा की मात्रा भी । चार बार के उपचार करने के बाद फिर से नया घोल वनायें। उपचारित करने के

बाद बीज कों थोडी देर उपरांत वोनी करें।

## बोने की विधि एवं बीज व क्यारी अन्तराल

प्रकन्दों को 40 सेमी. के अन्तराल पर बोना चाहिये। मेड़ या कूड़ विधि से बुवाई करनी चाहिये। प्रकन्दों को 5 सेमी .की गहराई पर बोना चाहिये। बाद में अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद या मिट्टी से ढक देना चाहिये। यदि रोपण करना है तो कतार से कतार 30 सेमी. और पौध से पौध 20 सेमी. पर करें। हल्दी व अदरक की रोपाई 15 X 15, 20 X '40 या 25 X '30 सेमी तथा सूरन के छोटे कन्दों (250–300 ग्राम ) के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की दूरी 50 X 50 सेंमी. एवं बड़े कन्दों (500 ग्राम या इससे अधिक) के बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की दूरी 90–100 सेंमी. रखना चाहिए। भूमि की दशा या जल वायु के प्रकार के अनुसार समतल कच्ची क्यारी, मेड–नाली आदि विधि से अदरक की वुवाई या रोपण किया जाता है ।

## समतल विधि

हल्की एवं ढालू भूमि में समतल विधि द्वारा रोपण या वुवाई की जाती हैं । खेती में जल निकास के लिये कुदाली या देशी हल से 5–6 सेमी .गहरी नाली बनाई जाती है जो जल के निकास में सहायक होती हैं । इन नालियों में कन्दों को 15–20 सेमी .की दूरी अनुसार रोपण किया जाता हैं। तथा रोपण के दो माह बाद पौधो पर मिट्टी चढ़ाकर मेडनाली विधि बनाना लाभदायक रहता हैं।

## उँची क्यारी विधि

इस विधि में 1'3 मी. आकार की क्यारियों को जमीन से 20 सेमी उॅची बनाकर प्रत्येक क्यारी में 50 सेमी .चौड़ी नाली जल निकास के लिये बनाई जाती हैं । बरसात के बाद यही नाली सिचाई के काम में आ सकती हैं । इन उथली क्यारियों में हल्दी व अदरक 30 –20 सेमी की दूरी पर 5–6 सेमी गहराई पर कन्दों की वुवाई करते हैं। भारी भूमि के लिये यह विधि अच्छी है।

## मेड़ नाली विधि से हल्दी, सूरन व अदरक

इस विधि का प्रयोग सभी प्रकार की भूमियों में किया जा सकता हैं। तैयार खेत में 60 या 40 सेमी की दूरी पर मेड़ नाली का निर्माण हल या फावडे से काट के किया जा सकता हैं। बीज की गहराई 5–6 सेमी रखी जाती हैं।

## रोपण हेतु अदरक की नर्सरी तैयार करना

यदि पानी की उपलब्धता नही या कम है तो अदरक की नर्सरी तैयार करते हैं। पौधशाला में एक माह अंकुरण के लिये रखा जाता। अदरक की नर्सरी तैयार करने हेतु उपस्थित बीजो या कन्दों को गोबर की सड़ी खाद और रेत (50:50) के मिश्रण से तैयार बीज शैया पर फैलाकर उसी मिश्रण से ढ़क देना चाहिए तथा सुबह–शाम पानी का छिड़काव करते रहना चाहिये । कन्दों के अंकुरित होने एवं जड़ो से जमाव शुरू होने पर उसे मुख्य खेत में मानसून की बारिश के साथ रोपण कर देना चाहिये।

## छाया का प्रभाव

हल्दी, सूरन व अदरक को हल्की छाया देने से खुला में बोई गयी अदरक से 25 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त होती है तथा कन्दों की गुणवत्ता में भी उचित वृद्धि पायी गयी हैं।

## फसल प्रणाली

हल्दी, सूरन व अदरक की फसल को रोग एवं कीटों में कमी लाने एवं मृदा के पोषक तत्वो के बीच सन्तुलन रखने हेतु हल्दी, सूरन व अदरक को सिंचित भूमि में पान, प्याज, लहसुन, मिर्च अन्य सब्जियों, गन्ना, मक्का और मूँगफली के साथ फसल को उगाया जा सकता है। वर्षा अधिक सिंचित वातावरण में 3–4 साल में एकबार आलू, रतालू, मिर्च, धनियाँ के साथ या अकेले ही फसल चक्र में आ सकती हैं। मक्का या उर्द के साथ अन्तरावर्ती फसल लेने में मक्का 5–6 किग्रा प्रति एकड़ तथा .उर्द 10–15 किग्रा प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता होती हैं। मक्का और उर्द हल्दी, सूरन व अदरक की फसल को छाया प्रदान करती हैं तथा मक्का 6–7 कु प्रति एकड़ और उर्द 2 कु प्रति एकड़ अतरिक्त उपज प्राप्त होती है।

## प्रजातियाँ

सूरन की कई प्रजातियां है जैसे : संतरागाछी , गजेन्द्र, पद्मा, कुसुम, आजाद, श्री आतिरा आदि प्रमुख हैं। आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या द्वारा विकसित प्रजाति नरेंद्र रवि, नरेन्द्र आशा अधिकतम उत्पादन देने वाली, खाने में स्वादिष्ट एवं कनकनाहट रहित हैं। इन प्रजातियों की उत्पादन क्षमता 600 से 800 कुन्टल प्रति हेक्टेयर है। अदरक की भी कई प्रजातियां है जैसे आई.आई. एस. आर . (रजाता), महिमा, वर्धा (आई आई.एस.आर ), सुप्रभा, सुरभि, सुरूचि, हिमिगिरी व रियो–डे–जिनेरियो आदि प्रमुख हैं। हल्दी की राजेन्द्र सोनिया, एन.डी.एच 1, 2, 3, 19, आर.एच. 9 / 90 तथा आर.एच. 13 / 90 आदि प्रजातियॉ प्रमुखता से उगाई जातीं हैं।

## खाद एवं उर्वरक

हल्दी, सूरन व अदरक के लिए 250 कुन्टल भलीभाँति सड़ी हुई गोबर की खाद के अतिरिक्त 40 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फास्फोरस एवं 60 किग्रा.पोटाश की प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। फास्फोरस की पूरी मात्रा तथा नत्रजन एवं पोटाश की आधी मात्रा कन्दों की बुआई के समय तथा शेष आधी मात्रा बुआई के 80–90 दिन बाद देना चाहिए।

## सिंचाई एवं अन्तः सस्य क्रियाएं

हल्दी, सूरन व अदरक में सिंचाई की आवश्यकता आरम्भिक अवस्था में मानसून के आने से पहले पड़ती है। ध्यान रहे कि खेत में पानी न रूकने पाए इससे कन्दों में बीमारी या सड़न की सम्भावना रहती है। वर्षा ऋतु में एक बार हाथ से निराई करने या स्टाम्प (पेन्डीमेथिलीन) खरपतवारनाशी के 3.5 लीटर दवा प्रति हेक्टेयर की दर से 1000 लीटर पानी में मिलाकर बुआई के बाद लेकिन खरपतवार उगने से पहले छिड़काव करने से खरपतवार की समस्या से निजात मिल सकती है। बुआई के 50–60 दिन बाद एक बार गुड़ाई करके मिट्टी चढ़ाने से अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। बुआई के तुरंत बाद पुआल अथवा पत्तियों से खेत में मल्चिंग कर देने से अच्छे जमाव के साथ–साथ सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती है। खरपतवार कम होने के साथ ही अच्छी उपज प्राप्त होती है।

## कीट एवं रोग प्रबन्ध

### कीट

### थ्रिप्स

छोटे लाल, काला एवं उजले रंग के कीड़े पत्तियों के रस को चूसते हैं एवं पत्तियों को मोड़कर पाईपनुमा बना देते हैं। इसके बचाव के लिए डाईमिथियोट 1.5 मिली या कार्बाराइल का 1.0 मिली का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अंतराल पर तीन छिड़काव करें।

### झुलसा

यह जीवाणु जनित रोग है। पत्तियों पर छोटे–छोटे गोलाकार हल्के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो आगे चलकर सूखकर काले पड़ जाते हैं तथा पत्तियां धीरे–धीरे पीली पड़ जाती हैं। इस रोग का प्रकोप बढ़ने पर इसका असर तनों एवं कन्दों तक आ जाता है।

### रोकथाम

बीज कन्द का चयन रोग रहित स्वस्थ पौध से करना चाहिए। बुआई से पहले कन्दों का शोधन 2 प्रतिशत तूतिया या कैलेक्सीन 1 ग्राम प्रति लीटर या डाईथेन एम –45 के 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में 20–30 मिनट तक डुबोकर उपचारित करना चाहिए। सूरन की खड़ी फसल रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर रोग जनित पौधों पर एग्रीमाईसिन के 10 पीपीएम के घोल का छिड़काव तीन बार 15–20 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए या रीडोमिल दवा को एक लीटर पानी में 2 ग्राम की दर से मिलाकर 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

### तना गलन रोग

सूरन का यह मृदा जनित रोग हैअतः इसका पहला लक्षण कालर भाग (तना एवं कन्द के जोड़) पर दिखाई

पड़ता है । इसमे पानी के गोल धब्बे के साथ पूरा सफेदी लिए हुए धब्बे दिखाई देते हैं।इस रोग में पत्तियां आगे की ओर पीली दिखाई पड़ने लगती हैं और धीरे–धीरे पूरा पौधा पीला पड़ जाता है और अन्ततः कालर वाले भाग के सड़ने के कारण तना सिकुड़ कर गिर जाता है।

### रोकथाम

उचित फसल चक्र अपनाएं। रोगी पौधों एवं उनके अवशेषों को तुरंत खेत से बाहर कर देना चाहिए। जल निकास की उचित व्यवस्था करना चाहिए। बुआई से पहले बीज कन्दों को डाईथेन एम–45 या रीडोमिल का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल तैयार कर कन्द को 20–30 मिनट तक डुबोकर उपचारित कर लेना चाहिए। एक माह के अन्तराल पर पौधे के किनारे की भूमि को कैप्टान के 2 प्रतिशत घोल से दो बार तर करना चाहिए।

### मोजैक

इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों पर हल्के हरे पीले धब्बे बन जाते है। प्रभावित पत्तियां सिकुड़ कर विकृत एवं भूरी हो जाती हैं। नई पत्तियों पर इस रोग का प्रकोप ज्यादा दिखाई देता है परिणामस्वरूप पौधों की बढ़वार रूक जाती है। जिसका सीधा असर उत्पादन पर पड़ता है। इस रोग के अधिक संक्रमण की अवस्था में पत्तियों का पीला पड़ना और शिराओं का उभार प्रमुख लक्षण है।

### रोकथाम

रोगग्रस्त पौधों से बुआई हेतु कन्द का चयन नही करना चाहिए। रोगी पौधों को खेत से निकालकर मिट्टी में दबा देना चाहिए। रोग फैलाने वाले कीटों के रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफास (0.05 प्रतिशत) 5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी में मिलाकर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

### प्रकंद विगलन रोग

पत्ती पीली पड़कर सूखने लगती है तथा ज़मीन के ऊपर का तना गल जाता है। भूमि के भीतर का प्रकंद भी सड़कर गोबर की खाद की तरह हो जाता है इस रोग के बचाव हेहु इंडोफिल एम–45 का 2.5 ग्रा0 एवं वेविस्टीन का 1 ग्राम मिश्रण बनाकर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर बीज उपचारित करें। खड़ी फसल पर 15 दिन के अंतराल में दो से तीन छिड़काव करें।

### पर्णधब्बा रोग

पत्तियों के बीच में या किनारे पर बड़े–बड़े धब्बे बन जाते है जिससे फसल की वृद्धि रुक जाती है। पर्ण धब्बे के बचाव के लिए 15 दिन के बाद इंडोफिल एम–45 का 2.5 ग्रा0 एवं वेविस्टीन 1 ग्रा0 का मिश्रण बनाकर प्रति ली0 पानी, घोल बनाकर छिडकाव करे।

### उपज

हल्दी की औसत उपज 250 से 300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। सूरन की खुदाई कन्दों की बुआई के 6–7 महीने बाद की जाती है। जब सूरन की पत्तियां पीली पड़कर गिरने लगें तो खुदाई के लिए उपयुक्त समय समझा जाता है। अच्छा बाजार मूल्य प्राप्त करने के लिए इनकी खुदाई पहले भी की जा सकती है। परिपक्व कन्दों को हवादार कमरों में बिना किसी नुकसान के कई महीनों तक रखा जा सकता है। सूरन में प्रति हेक्टेयर कन्दों की उपज 500 से 700 कुन्टल है। उन्नतिशील प्रजातियों के चयन और वैज्ञानिक सस्य तकनीक अपनाकर सूरन में 1000 से 1200 कुन्टल तक उपज प्राप्त किया जा सकता है। ताजा हरे अदरक के रूप में 100–150 कु. उपज /हे. प्राप्त हो जाती है । जो सूखाने के बाद 20–25 कु. तक आ जाती हैं । उन्नत किस्मो के प्रयोग एवं अच्छे प्रबंधन द्वारा औसत उपज 300कु./हे. तक प्राप्त की जा सकती है। इसके लिये अदरक को खेत में 3–4 सप्ताह तक अधिक छोड़ना पडता है जिससे कन्दों की उपरी परत पक जाती है और मोटी भी हो जाती हैं।●

# मूंग की उन्नत खेती में सामयिक कार्य

संजीत कुमार1, ए. पी. राव2 एवं नरेंद्र प्रताप1*

किसान भाईयों, मूंग को खरीफ, रबी व जायद तीनों मौसमों में आसानी से उगाया जा सकता है। उत्तरी भारत में इसे बारिश व गर्मी के मौसम में उगाते हैं। ऐसे इलाके, जहां पर 60 से 75 सेंटीमीटर तक सालाना बारिश होती है, मूंग की खेती के लिए उपयुक्त हैं।

## भूमि

सिंचित एवं असिंचित दोनों क्षेत्रों में इस की खेती आसानी से की जा सकती है। इस की सफलतापूर्वक खेती के लिए अच्छी जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी सब से अच्छी मानी जाती है।

## मूंग की प्रजातियां

नरेंद्र मूंग 1, पंत मूंग 2, पंत मूंग 4, एच.यू.एम.6, सुनैना, जवाहर मूंग 45, जवाहर मूंग 70 आदि ।

## बीज की मात्रा

गर्मी के मौसम में मूंग के लिए बीज दर 20 किलोग्राम प्रति हेक्टयर रखनी चाहिए और बोआई कतारों में 20 से 25 सेंटीमीटर की दूरी पर करनी चाहिए। खरीफ मौसम में 12 से 15 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टयर की दर से डालना फायदेमंद होगा और बोआई कतारों में 30 से 40 सेंटीमीटर की दूरी पर करनी चाहिए।

## बोआई का समय व तरीका

जायद मूंग की बोआई, जहां सिंचाई की सुविधा हो वहां रबी फसलों की कटाई के तुरंत बाद कर देनी चाहिए। खरीफ मौसम में मूंग की बोआई मानसून आने पर जून के दूसरे पखवाडे से जुलाई के पहले पखवाडे के बीच करनी चाहिए। मूंग की बोआई कतारों में करनी चाहिए। 2 कतारों के बीच की दूरी 30 से 45 सेंटीमीटर रखनी चाहिए। बीजों को 4 से 5 सेंटीमीटर की गहराई पर बोना चाहिए। मूंग के बीजों को पहले कार्बेंडाजिम से उपचारित करने के बाद ही बोना चाहिए।

## खेत की तैयारी

खेत में 1 बार मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई कर के 2 से 3 बार कल्टीवेटर या देशी हल से जुताई करनी चाहिए और पाटा चला कर खेत को बराबर बना लेना चाहिए।

## खाद व उर्वरक

मूंग दलहनी फसल है, इसलिए इस में ज्यादा नाइट्रोजन की जरूरत नहीं पड़ती है, फिर भी 20 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फास्फोरस व 20 किलोग्राम पोटाश की मात्रा प्रति हेक्टयर की दर से बोआई के समय देना फायदेमंद होगा। गंधक की कमी वाले क्षेत्रों में गंधकयुक्त उर्वरक 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के हिसाब से देना चाहिए। सभी चारों तरह के उर्वरकों की पूरी मात्रा बोआई से पहले या बोआई के समय ही देनी चाहिए।

## सिंचाई व जल निकास

खरीफ में मूंग की फसल को सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती है। अधिक बारिश की दशा में खेत से पानी निकालना बेहद जरूरी होता है। पानी न निकालने से पद्गलन रोग हो जाता है, जिस से फसल को भारी नुकसान होता है। गर्मी में मूंग की फसल में खरीफ की तुलना में पानी की ज्यादा जरूरत होती है। गर्मी के मौसम में 15 से 20 दिनों के अंतर पर 3 से 4 सिंचाई करनी चाहिए।

## निराई–गुडाई व खरपतवार नियंत्रण

बोआई के 15 से 20 दिनों बाद पहली और 40 से 45 दिनों बाद दूसरी निराई करनी चाहिए। घास व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को रासायनिक विधि द्वारा खत्म करने के लिए फ्लूक्लोरिलिन 45 ईसी की 1.5 लीटर मात्रा प्रति हेक्टयर 800 से 1000 लीटर पानी में घोल कर बोआई से पहले खेत में छिड़काव करें।

## मूंग के कीट

### काला लाही माहूं

नए पौधे से फली निकलने की दशा में इस कीट के

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, विषय वस्तु विशेषज्ञ पादप प्रजनन कृषि विज्ञान केंद्र वाराणसी, 2. निदेशक प्रसार, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौ. वि. वि., कुमारगंज, अयोध्या

शिशु व वयस्क पौधों की पत्तियों पर पाए जाते हैं। ये बसंतकालीन फसल की मुलायम टहनियों, फूलों व कच्ची फलियों से रस चूसते हैं।

### रोकथाम

माहूं का प्रकोप होने पर पीले चिपचिपे ट्रैप का इस्तेमाल करें, ताकि माहूं ट्रैप पर चिपक कर मर जाएं। नीम का अर्क 5 प्रतिशत या 1.25 लीटर नीम का तेल 100 लीटर पानी में मिला कर छिड़कें। इसके बावजूद रोकथाम न हो तो मेटासिस्टाक्स 25 ईसी या डाइमेथोएट 30 ईसी या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल या थायोमेक्जाम 25 ईसी 1 मिलीमीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़कें।

### हरा फुदका (जैसिड)

फसल की शुरुआती दशा से ले कर पौधों की पत्तियां व फलियां निकलने तक इस के शिशु व वयस्क हमला कर के रस चूसते हैं। रोगी पौधों की बढ़वार सामान्य से काफी कम हो जाती है।

### रोकथाम

अकेली फसल के बजाय मिश्रित खेती करनी चाहिए। खासकर ज्यादा लंबाई वाली फसलों जैसे गन्ना, ज्वार व सूरजमुखी वगैरह में से किसी एक को मूंग के साथ 6:1 या 6:2 के अनुपात में लगाना चाहिए। इससे रोशनी पसंद करने वाले हरा फुदका जैसे कीड़ों की संख्या पर बहुत हद तक नियंत्रण हो जाता है। इसके बाद भी रोकथाम न हो तो मेटासिस्टाक्स 25 ईसी या डाइमेथोएट 30 ईसी या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल या थायोमेक्जाम 25 ईसी 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़कें।

### सफेद मक्खी

इस कीट के द्वारा फसल को कई तरह से नुकसान पहुंचाया जाता है। यह पौधों से रस चूसती है और पत्तियों पर स्रावित मधु छोड़ती है। द्रव पर काला चूर्णी फफूंदी (शूटी मोल्ड) के पनपने व फैलने से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में रुकावट होती है और पीला चितकबरा रोग (पीला मोजैक) के विषाणु तेजी से फैलते हैं। रोगी फसल पूरी तरह से बरबाद हो जाती है।

### रोकथाम

सफेद मक्खी से बचाव के लिए बोआई से 24 घंटे पहले डायमेथोएट 30 ईसी कीटनाशी रसायन से 8.0 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए। शुद्ध फसल के बजाय मिश्रित खेती करना ज्यादा लाभप्रद है। विशेष रूप से ज्यादा लंबाई वाली फसलों जैसे गन्ना, ज्वार व सूरजमुखी वगैरह में से किसी 1 को मूंग के साथ 6:1 या 6:2 अनुपात से लगाने से रोशनी पसंद करने वाले सफेद मक्खी जैसे कीड़ों की संख्या पर बहुत हद तक नियंत्रण हो पाता है।

पीला मोजैक रोग के विषाणु को फैलाने वाली सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए मिथाइल डेमीटान (मेटासिस्टाक्स) 25 ईसी का 625 मिलीलीटर या मैलाथियान 50 ईसी या डायमेथोएट 30 ईसी का 1 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से जरूरत के मुताबिक छिड़काव करना चाहिए।

### थ्रिप्स

मूंग की फसल पर फूल की दशा में गर्मी में मुलायम कलियों पर थ्रिप्स कीटों का हमला होता है। ये फूलों को बहुत नुकसान पहुंचाते हैं। मूंग की फलियों पर भी थ्रिप्स कीटों का प्रकोप होता है और उन में दाने विकसित नहीं हो पाते। सभी रस चूसक कीटों में थ्रिप्स सब से ज्यादा हानिकारक है।

### रोकथाम

थ्रिप्स की रोकथाम करने के लिए फूल खिलने से पहले ही डायमेथोएट 30 ईसी या मैलाथियान 50 ईसी का 1 लीटर प्रति हेक्टेयर या मेटासिस्टाक्स 25 ईसी का 700 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

### नीली तितली

फूल व फली की दशा में इस के पिल्लू मुलायम कलियों व फूलों पर हमला करते हैं। ये फलियों में छेद बना कर घुस जाते हैं व अंदर के ऊतक को खाते हैं। ये फलियों के अंदर विकसित हो रहे दानों को विशेष रूप से नुकसान पहुंचाते हैं।

### रोकथाम

फली बेधक नीली तितली की रोकथाम के लिए निबौली (सूखा हुआ नीम बीज) के चूर्ण को पानी में

घोल (5.0 प्रतिशत) कर फूल निकलने के साथ छिड़काव करना चाहिए। यदि फली बेधक तितली की संख्या काफी अधिक हो जाए तो फली बनने की शुरुआती अवस्था में मैलाथियान 50 ईसी का 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

## मूंग के रोग

### पीली चितेरी रोग (येलो मोजेक)

मूंग का पीला चितेरी रोग विषाणु द्वारा पैदा होने वाला सब से खतरनाक रोग है। यह विषाणु बीज व छूने से फैलता है। पीली चितेरी रोग सफेद मक्खी (बेमिसिया टैबेसाई) जो एक रस चूसक कीट है के द्वारा फैलता है। रोग से प्रभावित पौधे देर से पनपते हैं। इन पौधों में फूल और फलियां स्वस्थ पौधों के मुकाबले बहुत ही कम लगती हैं।

### रोकथाम

बोआई के लिए रोग रोधी व उन्नत प्रजातियों, नरेंद्र मूंग 1, पीडीएम 11, पूसा विशाल, एच.यू.एम. 6 आदि का चयन करें। सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफास (0. 04 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

### झुर्रीदार पत्ती रोग (लीफ क्रिंकल)

यह रोग 'उर्द बीन लीफ क्रिंकल विषाणु' द्वारा होता है। रोग का फैलाव पौधे के रस (सैप) व बीज से होता है। यह खेत में लाही (माहू) व अन्य कीटों द्वारा भी फैलता है। इस विषाणु के संक्रमण से फूल कलिकाओं में पराग कण बांझ हो जाते हैं, जिस से रोगी पौधों में फलियां कम लगती हैं।

### रोकथाम

बोआई के लिए रोग रोधी व उन्नत प्रजातियों का चयन करना चाहिए। सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए फसल पर मेटासिस्टाक्स या मैलाथियान या डामेथोएट या मोनोक्रोटोफास (0. 04 प्रतिशत ) का छिड़काव करना चाहिए।

### सर्कोस्पोरा पत्र टिक्का रोग

यह 'सर्कोस्पोरा' नामक प्रजातियों द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं। अनुकूल वातावरण में ये धब्बे बड़े आकार के हो जाते हैं। फूल आने व फलियां बनने के समय रोगी पत्तियां गिर जाती हैं। रोग पैदा करने वाले कवक बीज व रोग ग्रसित पौधों के मलवे पर भूमि में जीवित रहते हैं।

### रोकथाम

बोआई से पहले बीजों को कवकनाशी कार्बाडेंजिम 2 ग्राम या थीरम 2–5 ग्राम से प्रति किलोग्राम की दर से उपचारित करना चाहिए। फसल पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही कार्बेन्डाजीम (0.1 प्रतिशत) कवकनाशी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

### चूर्णी फफूंदी रोग

यह रोग इरीसिफी पोलीगोनाई नामक कवक द्वारा होता है। गरम व सूखे वातावरण में यह रोग तेजी से फैलता है। इस रोग में पौधों की पत्तियों, तनों व फलियों पर सफेद चूर्णी धब्बे दिखाई देते हैं। रोग के ज्यादा होने से पत्तियां पूरी बनने से पहले सूख जाती हैं।

### रोकथाम

फसल पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही कार्बेंडाजीम की 1 ग्राम या सल्फेक्स 3 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।

### कटाई–मड़ाई

फसल की कटाई मूंग की किस्म पर निर्भर करती है। एक ही समय में पकने वाली प्रजाति में जब फसल 80 प्रतिशत तक पक जाती है, तो उसे जड़ से उखाड़ लेते हैं या काट लेते हैं। उस के बाद धूप में सुखा कर ट्रैक्टर चलाकर या लकड़ी के डंडे से पीटकर दाना अलग कर लेते हैं। सही समय पर फसल की गहाई के बाद दाना सुखाकर कर के भंडारण करें।

### उपज

मूंग की औसत उपज 8 से 10 क्विंटल प्रति हेक्टयर होती है। उन्नत खेती करने पर इस की पैदावार 12–15 क्विंटल प्रति हेक्टयर तक ली जा सकती है।●

# जायद सब्जियों का समेकित कीट प्रबंधन

डॉ. प्रेम शंकर, शैलेन्द्र सिंह, डॉ. रविप्रकाश मौर्य एवं प्रदीप कुमार

सब्जियों के कुल उत्पादन में जायद सब्जियों का प्रमुख स्थान है। गर्मी के महीनों में ये मुख्य आहार का कार्य करती है। अन्य ऋतुओं की फसलों की तरह इनमें भी कीटों का प्रकोप होता है, जिससे उत्पादन तथा गुणवत्ता पर कुप्रभाव पड़ता है। अतः यह आवश्यक है कि कृषक भाइयों को जायद की सब्जियों में नुकसान पहुंचाने वाले कीटों तथा उनके प्रबन्धन के बारे में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए।

### फल मक्खी

यह कद्दू परिवार की सब्जियों जैसे– लौकी, करेला, कद्दू, खीरा, तरोई, खरबूजा, तरबूज आदि को हानि पहुंचाने वाला प्रमुख कीट है। प्रौढ़ मक्खी भूरे रंग की होती है, जिसके शरीर पर दो पारदर्शक पंख होते हैं तथा टांगे पीले रंग की होती हैं। सूंडी जिन्हें मैगट कहते हैं, पीले रंग की होती है। मैगट के शरीर का अगला हिस्सा मोटा हल्का काला तथा पिछला हिस्सा बेलनाकार होता है।

### क्षति के प्रकार

फलों को हानि मैगट पहुंचाते हैं जबकि मादा मक्खी अपने नुकीले डंक की सहायता से अण्डे देती है जिससे अण्डे दिए गए स्थान पर रस निकलना प्रारम्भ हो जाता है। बाद में उस स्थान पर भूरा काला धब्बा बन जाता है। मक्खी जिस स्थान पर अण्डे देती है उस जगह के ऊतक नष्ट हो जाते हैं, जिससे फल टेढ़े–मेढ़े हो जाते हैं। अण्डों से सूंडियां निकलने के बाद फलों के अन्दर घुसकर खाना शुरू कर देती हैं जिससे फलों में सड़न उत्पन्न हो जाती है और उनका गूदा मटमैला हो जाता है। कीट के प्रकोप के कारण सब्जियां खाने एवं व्यापार योग्य नहीं रह जाती हैं।

### प्रबन्धन

खेतों में ग्रीष्म कालीन जुताई करनी चाहिए। कद्दूवर्गीय सब्जियों को बागों में नहीं लगाना चाहिए। सूंड़ी एवं प्यूपा ग्रसित फलों को एकत्र कर 1.0 मी. गहरे गड्ढ़े में दबा देना चाहिए। गन्ध पास की सहायता से नर कीटों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। नर कीटों को आकर्षित करने हेतु मिथाइल यूजीनॉल 0.1 प्रतिशत एसीटामीप्रिड 0.1 प्रतिशत को 1.0 ली. शीरे के घोल को चौड़े मुंह वाली बोतल में डालकर 10 शीशी प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए। मिथाइल यूजीनॉल 4 भाग, एल्कोहल 6 भाग तथा थायामोथोजाम 1 भाग, 5 से.मी. लम्बे एवं 1 से.मी. मोटे वर्गाकार प्लाईवुड के टुकड़े को 24 घण्टे घोल में डुबोकर प्लास्टिक की बोतल लटकाकर प्रयोग करना चाहिए। यदि कीट का प्रकोप अधिक हो तो थायामोथोजाम दवा का 200 ग्राम मात्रा को 8–10 ली. पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

### कद्दू का लाल कीट (लाल सूड़ी)/रेड पम्पकिन बोटल

इस कीट की ग्रब व प्रौढ़ दोनों ही अवस्था फसलों को हानि पहुंचाती है, इस कीट के प्रौढ़ बेलनाकार, जिनका ऊपरी रंग गेरूआं लाल, पीला होता है। ग्रब अवस्था पौधों की मुलायम जड़ों को खुरच–खुरच कर खाती हैं जबकि प्रौढ़ कीट पौधों की मुलायम कलिका व पत्तियों को काटकर खाते हैं। इससे पौधों की वृद्धि रूक जाती है तथा पत्तियां छिद्रयुक्त दिखाई देती है, इस कीट का प्रकोप मध्य फरवरी से सितम्बर तक रहता है।

### प्रबन्धन

फसल खत्म होने पर बेलों को खेत से निकालकर जला देना चाहिए। फसल की अगेती बुआई से कीटों के प्रभाव को कम किया जा सकता है। संतरी रंग के भृंग को सुबह के समय इकट्ठा करके नष्ट कर दें। फसल में इन कीटों की ग्रब अवस्था में जमीन में रहकर जड़ों को काटती हैं, जिसकी रोकथाम हेतु क्लोरोपायरीफास 20 ई.सी. की 2.5 ली/हे. मात्रा को

*• डॉ. प्रेम शंकर, वैज्ञानिक (फसल सुरक्षा) •• डॉ. एस.एन. सिंह, अध्यक्ष, कृशि विज्ञान केन्द्र, बस्ती ••• शैलेन्द्र सिंह, वैज्ञानिक (फसल सुरक्षा), कृषि विज्ञान केन्द्र, गोरखपुर–।। •••• डॉ. दिनेश कुमार यादव, वैज्ञानिक (उद्यान) कृशि विज्ञान केन्द्र, चन्दौली।

फसल की बुआई के एक माह बाद सिंचाई जल के साथ प्रयोग करें, जिससे की पौधों में मौजूद ग्रब लटों को नष्ट किया जा सके। नीमतेल (नीमारीन) की 5 मिली./ली. पानी की दर से 10 दिन के अन्तराल पर खड़ी फसल में छिड़काव करते रहना चाहिए या घर की राखी या जीवामृत का छिड़काव करते रहना चाहिए। कीट की उग्र अवस्था होने पर फ्रिवोनिल 5 प्रतिशत एस.सी. 2 मिली. या इन्डोक्जाकार्व 14.5 एस. सी. की 5 मिली. के साथ सरफेक्टेन्ट/स्टीकर 1 मिली. की मात्रा को मिलाकर 5 ली. पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

### अमेरिकन सूड़ी

यह भिण्डी का प्रमुख कीट है। कीट का प्रौढ़ मटमैले रंग का शलभ होता है जो रात में सक्रिय होकर प्रकाश की ओर आकर्षित होता है। इस कीट की सूंड़ी का रंग हरा व भूरा होता है।

### हानि का प्रकार

कीट की सूड़ी प्रारम्भिक अवस्था में पौधों की मुलायम पत्तियों को खाकर नष्ट कर देती है। फल अवस्था में सूंड़ी भिण्डी में छेद कर फली के अन्दर के गूदे को खाकर नष्ट करती है। ग्रसित फलों में गोल–गोल छेद बन जाते हैं जिनमें कीट का मल चिपका रहता है। प्रभावित फलों का बाजार भाव गिर जाता है।

### प्रबन्धन

ग्रीष्म ऋतु में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए जिससे भूमि में पड़े हुए कीट के कोयों की तेज धूप के सम्पर्क में आने के कारण मृत्यु हो जाये। कीट आकर्षी फसल गेंदा या कपास को खेत के चारों ओर लगाने से मादा कीट अण्डे मुख्य फसल में न देकर प्रपंची फसल पर देती है जिससे मुख्य फसल कीट के प्रकोप से बच जाती है। परभक्षी चिड़ियों के बैठने हेतु खेत में जगह–जगह बर्ड पर्चर लगा देना चाहिए। ये चिड़ियां कीट की सूड़ियों को खाकर नष्ट कर देती है। परभक्षी प्रपंच/फीरोमोन ट्रेप की सहायता से शलभों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। नीम की निबौली का 4.0 प्रतिशत घोल बनाकर 8–10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए। एच.ए.एन.पी.वी. का 300 सूंड़ी तुल्यांक, 1.0 कि.ग्रा. गुड़ तथा 1.0 प्रतिशत चिपकने वाला पदार्थ मिलाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें। ट्राईकोग्रामा काइलोनिस अण्ड परजीवी के 50.000 अण्डे प्रति है, की दर से 15 दिन के अन्तराल पर फूल बनते समय 5–6 बार प्रयोग करें। बैसिलस थ्यूरिजिनेनसिस की 1.0 कि.ग्रा. मात्रा का प्रति है की दर से छिड़काव करें। स्पाइनोसेड की 45 ई.सी. की 200 एम.एल. मात्रा को 400–600 ली. पानी में घोलकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें। अधिक प्रकोप की दशा में फ्लूपेन्डाएमाइड की 39.35 प्रतिशत एस.सी. की 125 मि.ली. या इन्डोक्जाकार्व 15.8 प्रतिशत ई.सी. की 325 मिली. मात्रा को 400–600 ली. पानी में घोलकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।

### चित्तीदार सूड़ी

वयस्क कीट मध्यम आकार का पतंगा होता है जिसको सिर एवं वक्ष पीले रंग का होता है। नवजात इल्लियां भूरे–सफेद की लगभग 9 मि.मी. लम्बी जबकि पूर्ण विकसित इल्लियां 18–20 मि.मी. लम्बी होती है। इल्लियां के पृष्ठ भाग पर छोटे–छोटे कड़े बाल होते हैं अैर बीच–बीच में काली तथा नारंगी धब्बों वाली धारियां भी पायी जाती है इसलिए इसे धब्बों वाली या चित्तीदार इल्ली कहते हैं।

### हानि का प्रकार

इस कीट की इल्लियां भिण्डी के फलों, फूलों, कलियों एवं पौधों की कोमल टहनियों को क्षति पहुंचाती है। फसल के प्रारम्भ में ही जब पौधे दो–तीन सप्ताह के होते हैं उसी समय इल्लियां निकलकर पौधों के प्ररोहों में छिद्र करके प्रवेश कर जाती है परिणामस्वरूप वे मुरझा जाते हैं। इस तरह लगभग 50 प्रतिशत तक फसल नष्ट हो जाती है। जब पौधों पर फूल, कलियां एवं फल आने लगते हैं तो इल्लियां उनमें प्रवेश कर जाती हैं। प्रवेश छिद्र कीट के मलमूत्र से भरे हुए देखे जा सकते हैं। इस कीट के प्रकोप से कलियां नहीं खिलती, फूल झड़ने लगते हैं एवं फल दूषित, छोटे तथा खाने योग्य नहीं रह जाते हैं।

### प्रबन्धन

कीट की प्रारम्भिक अवस्था में ही प्रभावित प्ररोहों को

काटकर नष्ट कर देना चाहिए। जमीन पर गिरी हुई कलियों एवं क्षतिग्रस्त फलों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए। खेत में या खेत के चारों ओर उगे हुए परपोषी पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। फसल समाप्त होने के बाद खेत में छूटे हुए फसल के अवशेषों को एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए। कीट के आक्रमण की दशा में ट्राइकोग्रामा किलोनिस के 50.000 अण्डे/हे. की दर से खेत में छोड़े। यदि कीटनाशक प्रयोग करने की आवश्यकता हो तो उस दशा में इन्डोक्लाकार्व 15. 8 प्रतिशत ई.सी. की 325 मि.ली. मात्रा या फ्लूवेन्डामाइट 480 एस.सी. की 100 मि.ली. मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।

### फुदका

यह कद्दूवर्गीय फसलों को हानि पहुंचाने वाला प्रमुख रस चूसक कीट है जो आकार में छोटा, कोमल शरीर वाला तथा हरे–पीले रंग का होता है। इसे भुनगा के नाम से भी जाना जाता है। यह प्रायः पत्तियों की निचली सतह पर सैकड़ों की संख्या में चिपककर रस चूसते रहते हैं। पत्तियों को हिलाने पर ये उड़ते हुए दिखाई देते हैं।

### हानि का प्रकार

कीट के शिशू एवं प्रौढ़ दोनों पत्तियों की निचली सतह से रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं। अधिक प्रकोप की दशा में पत्तियां पीली पड़कर मुरझाना शुरू हो जाती हैं तथा बाद में सूख जाती हैं, जिससे हापर बर्न की स्थिति कहते हैं। यह कीट अपनी लार से विषैला पदार्थ स्त्रावित करता है जिसके प्रभाव से पत्तियां जली दिखाई देने लगती है।

### प्रबन्धन

खेत के पास उगे हुए अन्य परपोषी पौधों तथा खर–पतवारों को नष्ट कर दें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 125 मि.ली. या फिब्रोनिल 1.5 ली. मात्रा का 500–600 ली. पानी में घोल बनाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।

### मूल ग्रन्थि सूत्रकृमि

वयस्क मादा नाशपाती जैसी गोलाकार एक से दो मि. मी. लम्बी तथा 30 से. माइक्रोन चौड़ी होती है। नर का शंकु भारी मादा से बड़ा होता है। मादा 250 से 300 अण्डे देती है। अण्डे के अन्दर ही डिम्भक प्रथम निर्मोचन की अवस्था पार करते हैं। इनसे जो द्वितीय अवस्था के डिम्भक बनते हैं वे मृदा कड़ों के बीच रेंगते रहते हैं और उपयुक्त परपोषी जड़ों से सम्पर्क होने पर उनसे चिपक जाते हैं और जड़ों की बाह्य त्वचा को भेदकर उतकों में पहुंच जाते है। परपोषी के अन्दर डिम्भक में तीन निर्मोचन होते हैं। मादा अनिषेकजनन तरीके से अण्डे पैदा कर सकती है। सूत्रकृमि की शोषण क्रिया के फलस्वरूप पौधे के उतकों में तेजी से विभाजन होता है और उनकी कोशिकाओं का आकार बढ़ जाता है। इस प्रकार ग्रन्थियों का निर्माण होता है। इन्हीं ग्रन्थियों के अंदर सूत्रकृमि एक फसल काल से दूसरी फसल काल तक जीवित रहकर प्रारम्भिक आक्रमण करता है।

### हानि का प्रकार

यह सूत्रकृमि सब्जियों को बहुत अधिक क्षति पहुंचाता है। इसके कारण जड़ों में छोटी–छोटी गांठें बन जाती हैं तथा पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और पौधे की वृद्धि रूक जाती है। फलतः पौधों पर फलों की संख्या कम हो जाती है।

### प्रबन्धन

उपयुक्त फसल चक्र अपनाकर इसका प्रकोप मूल फसल पर कम किया जा सकता है। गर्मियों में खेत की दो से तीन बार जुताई करके मिट्टी अच्छी तरह सुखाने से डिम्भकों की संख्या को कम किया जा सकता है। यदि फसल चक्र में अधिक समय तक जल भराव वाली फसल जैसे कि धान ले ली जाए तो भी इसकी संख्या कम की जा सकती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ जैसे– लकड़ी का बुरादा, नीम की अण्डी की खली 25 किग्रा. प्रति हे. की दर से फसल लगाने से तीनों सप्ताह पूर्व खेत में मिलाकर मूल ग्रन्थियों की संख्या कम की जा सकती है। प्रतिरोधी प्रजाति का प्रयोग करना चाहिए तथा अधिक प्रकोप होने पर कार्बोफ्यूरान 3 जी की 30–35 किग्रा. मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में प्रयोग करना चाहिए। ●

# फलदार वृक्षों में सामयिक कार्य

डॉ0 विनोद कुमार सिंह एवं डॉ0 प्रमोदकुमार सिंह

**फ**लदार–वृक्षों का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण योगदान है। फलों का उत्पादन अधिक से अधिक प्राप्त करना हमारी प्राथमिक प्राथमिकता होनी चाहिए, क्योंकि फल वृक्षों से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के परिणामस्वरूप हमारी भारतीय अर्थव्यवस्था मजबूत होगी। अतएव वृक्षों में सामयिक प्रबंधन नितांत आवश्यक है।

### आतप दाह (Sun-burn)

जब वायुमंडल में कम आर्द्रता हो तथा तेज़ गर्म हवाएँ चल रही हों तो ऐसे समय में अधिक तापमान का होना काफी हानिकारक होता है। इससे पत्तियों से वाष्पोत्सर्जन की किया बढ़ जाती है जिससे पत्तियाँ और टहनियाँ सूख जाती है। बागों की दक्षिण पश्चिम दिशा में आतप दाह (Sun-burn) अधिक पाया जाता है।

### प्रतिरक्षण विधियाँ

### वायुरोधक

वायुरोधक या ऊँचे–ऊँचे वृक्ष बागों की पश्चिम दिशा में लगाकर पौधों और वृक्षों को लू और हवाओं से होने वाली हानि से काफी हद तक बचाया जा सकता है।

### सफेदी करना

पेड़ के मुख्य तने पर सफेदी करके पौधे को आपत दाह से बचाया जा सकता है। इससे कीड़े मकोड़े भी दूर रहते हैं।

### छाया करना

गर्मियों में अधिक ताप से छोटे पौधों की रक्षा छप्पर से ढक कर या छाया करके की जा सकती है। कभी–कभी पौधों के दक्षिण पश्चिम में छप्पर लगाकर छाया प्रदान की जाती है जिससे क्षति कम होती है।

### बागों में सिंचाई प्रबन्ध

ग्रीष्म ऋतु में शरद ऋतु की अपेक्षा सिंचाई जल्दी–जल्दी करनी पड़ती है। सिंचाई की मात्रा बलुई भूमि में अधिक होती है और कुछ फसलें जैसे केला, आम की तुलना में अधिक पानी चाहता है। आमतौर पर यदि ऊपर की एक मीटर भूमि नम है तो सिंचाई करने की कोई आवश्यकता नहीं होती।

### सिंचाई की विधियाँ

आमतौर पर पौधों की सिंचाई मुख्य तने के पास छोटे–छोटे थाले बनाकर करते हैं। सिंचाई की यह विधि ठीक नहीं है क्योंकि शोषण करने वाली जड़ें मुख्य तने से पेड़ की परिधि तक फैली रहती हैं। अतः पानी का थाला परिधि तक होना आवश्यक है। सिंचाई की प्रचलित 1) क्यारी विधि या चेक विधि (Check system or beds), (2) थाला विधि (Basin system) (3) वलय विधि (Ring system) (4) कूँड़ सिंचाई (Furrow system) (5) तोड़ या प्रवाहित विधि (Flood system) इन विधियोँ द्वारा आवश्यकतानुसार गर्मियों में सिंचाई आवश्यक है।

### खाद और उर्वरक देना

पौधों की बढ़वार, विकास और फल के लिए यह निश्चित हो चुका है कि पौधे को 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता पड़ती है। इन तत्वों में से 9 तत्वों की पौधे को अधिक मात्रा में आवश्यकता पड़ती है और इन्हें मुख्य तत्व (Major elements) कहते हैं, जैसे कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, मैग्नीशियम, कैल्शियम और गंधक। शेष 8 तत्व जैसे बोरान, जस्ता, ताँबा, मौलीब्डेनम, लोहा, मैंगनीज़, निकिल और क्लोरीन का कम मात्रा में आवश्यकता पड़ती है जिन्हें सूक्ष्म तत्व (Minor elements) कहते हैं। किसी भी एक तत्व की उचित मात्रा में कमी, पौधे की बढ़वार और उपज पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। एक पोषक तत्व भूमि या किसी रायायनिक या सूक्ष्म जीवाणु के प्रभाव से अलग है।

### प्रयोग करने की विधि

खाद और उर्वरकों की सही प्रयोग विधि, भूमि की

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान), कृषि विज्ञान केन्द्र, वाराणसी, **विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान), कृषि विज्ञज्ञन केन्द्र, मसौधा, अयोध्या

किस्म, जलवायु और अन्य कर्षण क्रियाओं पर आधारित है। तत्व के रूप में 100 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्राम फास्फोरस, 100 ग्राम पोटाश, 25 ग्राम कापर तथा 25 ग्राम जिंक को दो बराबर भागों में बांटकर आधी मात्रा नवरोपित बागों अथवा ऐसे पौधे जो मात्र वृक्ष के रूप में प्रयोग किए जा रहे हैं, यदि किसान भाई जनवरी में ना दिए हो तो माह अप्रैल में देकर सिंचाई कर दें। यही मात्रा फलत वाले वृक्षों में भी देना है। उर्वरक देने के बाद हल्की गुड़ाई कर सिंचाई कर देनी चाहिए। पौधे की प्रारंभिक अवस्था में उर्वरकों को पौधे की जड़ों के पास बिखेर कर मिट्टी में मिला देते हैं। जब पेड़ बड़े हो जाएं तो खाद और उर्वरक को पेड़ के पूरे फैलाव की परिधि तक डालकर अच्छी प्रकार मिला देते हैं। खाद और उर्वरक डालने के बाद सिंचाई आवश्यक है। 15–20 वर्ष आयु के आम के पौधे की खाद और उर्वरक ग्रहण करने वाली जड़ों का मुख्य भाग पेड़ की छतरी के नीचे की भूमि में तने से 120 से 380 सेमी. की दूरी तथा 30–60 सेमी. की गहराई पर स्थित होती है। अमरूद और माल्टा जाति के पौधों की भोजन ग्रहण करने वाली जड़ों का मुख्य भाग तने से 120–240 सेमी. की दूरी पर व 15–30 सेमी. की गहराई पर होती है। अंगूर में इस प्रकार की जड़ें 50–100 सेमी. की दूरी तथा 20–25 सेमी. गहराई पर स्थित होती है।

### (1) कोइलिया रोग (ब्लैकटिप)

यह रोग दैहिक असंतुलन के कारण होता है इसका प्रकोप फलों तक सीमित है। यह रोग ईंट के भट्टे से निकलने वाली गैसों सल्फर डाइऑक्साइड, कार्बनमोनोआक्साइड तथा इथलीन के निकलने के कारण होता है इसमें फल का निचला हिस्सा पहले हल्का पीला, बाद में भूरा तथा अंत में काला पड़ जाता है। काला भाग बाद में सूखकर सख्त पड़ जाता है। ऐसे फल परिपक्वता से पूर्व ही गिर जाते हैं। यह विकार बोरान की कमी के कारण होता है।

### रोकथाम

इस विकार की रोकथाम के लिए आम प्रक्षेत्रों के निकट ईंट के भट्टे नहीं खुलने देना चाहिए।

5 ग्राम सोडियम हाइड्राक्साइड को 1 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर कर दें।

### (2) गमोसिस

यह विकार पौधों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के कारण होता है, जैसे– जिंक, बोरान, तांबा एवं कैल्शियम। टहनियों की छाल में हल्की दरारे बन जाती हैं। इन दरारों से गोंद निकलता है। गंभीर प्रकोप की दशा में पौधे/वृक्ष सूखने लगते हैं।

### रोकथाम

एक पूर्ण पेड़ को 250 ग्राम जिंक सल्फेट, 250 ग्राम कॉपर सल्फेट (तूतिया), 125 ग्राम बोरेक्स (सुहागा) तथा 100 ग्राम बुझे चूने का मिश्रण प्रति वृक्ष के हिसाब से पेड़ के चारों तरफ शाखाओं के फैलाव तक बिखेर कर मिट्टी में मिला कर सिंचाई कर देनी चाहिए। इन सूक्ष्म पोषक तत्वों को साल में एक बार सितम्बर–अक्टूबर में देना चाहिए।

### (3) मैंगोमिलीबग या कढ़ीकीट

इसके शिशु कीट और प्रौढ़ दोनों कोमल शाखाओं व वृन्तों से रस चूसते हैं तथा अधिक प्रकोप में फल गिर जाते हैं। मादा कीट अप्रैल, मई में वृक्ष से उतरकर जमीन में लगभग 15 सेंटीमीटर गहराई तक थैली में अण्डे देती है। जिससे दिसम्बर–जनवरी में शिशु निकलते हैं। जो पेड़ों पर धीरे–धीरे रेंगकर चढ़ते हैं।

### रोकथाम

इनके नियंत्रण के लिए मई–जून के महीने में बाग की गहरी खुदाई करनी चाहिए, ताकि अण्डे ऊपर आकर तेज धूप से नष्ट हो जाय।

दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक थालों की गुड़ाई कराकर मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत धूल 150–200 ग्राम प्रति थाले के हिसाब से मिट्टी में मिला देना चाहिए।

### (4) शल्क कीट की रोकथाम

इन कीटों के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों मुलायम पत्तियों एवं टहनियों की निचली सतह पर अधिक संख्या में चिपके रहते हैं तथा रस चूस कर वृक्ष की पत्तियों पर एक प्रकार का चिपचिपा पदार्थ छोड़ते हैं, जिस पर काली

(शेष पृष्ठ 25 पर)

# दुधारू पशुओं का पोषण प्रबन्ध

डा. एल. सी. वर्मा, एवं 'डा. डी. पी. सिंह

भारत का दुग्ध उत्पादन में प्रथम स्थान है। यह उत्पादकता के कारण नहीं बल्कि पशु संख्या अधिक होने के कारण है। देश में हर साल लगभग 165 मिलियन टन दूध का उत्पादन होता है और वर्तमान में वैश्विक दूध उत्पादन का लगभग 9.5 प्रतिशत योगदान देता है। भारत दुनिया में दूध का सबसे बड़ा उपभेक्ता भी है। दूध संग्रह, परिवहन, प्रसंस्करण और वितरण की एकीकृत सहकारी प्रणाली देश में दूध के बड़े पैमाने पर उत्पादन कें लिये जिम्मेदार है। वर्ष 2016–17 में भारत ने 165404 हजार टन दूध का उत्पादन किया था। देश की सबसे ज्यादा भैंसों की आबादी उत्तर प्रदेश में है और दूसरी सबसे ज्यादा पशुधन आबादी भी वहीं है। राज्य में अधिकांश ग्रामीण आबादी पशुधन और डेयरी में लगी हुई है। साल 2016–17 में उत्तर प्रदेश ने 27770 हजार टन दूध का उत्पादन किया, इसके बावजूद दुग्ध उत्पादन की वृद्धि दर 3.5 से 4.5 प्रतिशत के करीब है। लेकिन फिर भी अन्य देशों के अपेक्षाकृत कम है। दुग्ध उत्पादन में वृद्धि के लिये जो अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू है, वो है दुधारू पशुओं का आहार। पशुओं को नियन्त्रित रूप में सर्वोत्तम आहार एवं चारा खिलाना चाहिये। जहॉ तक सम्भव हो स्वयं की उपलब्ध जमीन पर उगाया हुआ एवं सही समय पर काटा हुआ चारा दिया जाना चाहिये।

## खुराक

पशुओं द्वारा भूख को शांत करने कें लिये एक समय में जो भोजन खिलाया जाता है उसे खुराक कहते हैं।

## आहार

भोजन की वह आवश्यक मात्रा जिसे पशु 24 घंण्टे के दौरान खाते हैं, आहार कहलाती है।

## संतुलित आहार

ऐसा आहार जो पशु को आवश्यक पोषक तत्वों प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण एवं विटामिन का उचित अनुपात एवं मात्रा में प्रदान करे, जिससे कि पशु की एक दिन की बढ़वार, स्वास्थ्य, दुग्ध उत्पादन, प्रजनन क्षमता आदि बनायें रखें, संतुलित पशु आहार कहलाता है।

पशु का शरीर 75 प्रतिशत जल, 20 प्रतिशत प्रोटीन, 5 प्रतिशत खनिज पदार्थों एवं 1 प्रतिशत से भी कम कार्बोहाइड्रेट का बना होता है। शरीर की संरचना पर आयु व पोषण का बहुत प्रभाव होता है, बढ़ती उम्र के साथ जल की मात्रा में कमी परन्तु वसा में वृद्धि होती है। पशुओं को संतुलित आहार खिलाने से पशु उत्पादन क्षमता में 30–35 प्रतिशत तक की वृद्धि होती है।

**पशु आहार के आवश्यक तत्व**

| कार्बोहाइड्रेट | प्रोटीन | वसा | खनिज लवण | विटामिन | पानी |
|---|---|---|---|---|---|
| घुलनशील शर्करा, मांड हेमीसेल्युलोज सेल्युलोज | शुद्ध प्रोटीन अप्रोटीन | | वृहत तत्व बिरल तत्व | वसा युक्त जल युक्त | |

## कार्बोहाइड्रेट

ये हाइड्रोजन और आक्सीजन से मिलकर बनते हैं। कार्बोहाइड्रेट दो तरह के होते है। इसमें शर्करा, मॉड, हेमीसेल्यूलोज ज्यादा पाचनशील सेल्युलोज और सेल्युलोज से जुड़ा हेमीसेल्युलोज कम पाचनशील होता है।

## प्रोटीन

यह नत्रजन, कार्बन, हाइड्रोजन एवं आक्सीजन के मिलने से बनते हैं प्रोटीन बहुत से अमीनों अम्ल के मिलने से बनते हैं। जो पशु शरीर में मांस बनाना, शरीर वृद्धि, रोगों के विरूद्ध प्रतिकारक शक्ति, प्रजनन शक्ति, एंजाइम एवं हार्मोन्स की सामान्य क्रिया एवं दुग्ध उत्पादन में बढ़ोत्तरी करना। दो दाल वाली

अध्यक्ष एवं 'वरिष्ठ पशु वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र, सिद्धार्थनगर तथा ''वैज्ञानिक पशु विज्ञान, आनन्द कृषि विश्वविद्यालय, आनंद, गुजरात .वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, विषय वस्तु विशेषज्ञ पादप प्रजनन कृषि विज्ञान केंद्र वाराणसी, 2. निदेशक प्रसार, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौ. वि. वि., कुमारगंज, अयोध्या

फसलें जैसेः बरसीम, लूसर्न, लोबिया, ग्वार, सोयाबीन, खली आदि इसके प्रमुख स्रोत हैं।

### वसा

वसा पानी में अघुलनशील तथा इथर, अल्कोहल, कार्बन डाई सल्फाइड में घुलनशील होती है। इससे कार्बन, हाइड्रोजन एवं आक्सीजन तत्व पशु को प्राप्त होते हैं। इसका मुख्य कार्य ऊर्जा निर्माण, जोंड़ों का हलचल, त्वचा चमकना, शक्ति प्रदान करना। सभी प्रकार की खली, बिनौले, सोयाबीन, आदि इसके प्रमुख स्रोत हैं।

### खनिज लवण

जो तत्व शरीर में ज्यादा इस्तेमाल होते हैं, वृहद खनिज तत्व तथा जिन तत्वों की पशु शरीर में आवश्यकता कम होती है विरल तत्व होते हैं। वृहद तत्व जैसेः कैल्सियम, फास्फोरस, सोडियम, पोटैशियम, मैग्नीशियम, सल्फर तथा क्लोरीन। विरल तत्व जैसेः आयोडीन, मैगनीज, तॉबा, कोबाल्ट, जस्ता, सैलिनियम, मोलिब्डेनम, क्रोमियम आदि। जो हड्डी मजबूत बनाना, रोग प्रतिरोधक क्षमता, भोजन पचाने में, रक्त को आक्सीजन पहुॅचाना, शरीर क्रियाओं में संतुलन रखना आदि में कार्य करता है। हरा चारा, खनिज मिश्रण, खलियॉ इत्यादि इसके प्रमुख स्रोत हैं।

### विटामिन

विटामिन ए. डी. ई तथा के. वसा में घुलनशील होते हैं तथा विटामिन बी. एवं सी. पानी में घुलनशील होती हैं। विटामिन की कमी से बिमारियों के लक्षण पशु में पाये जाते हैं। जो शरीर की सामान्य वृद्धि, पशु को स्वस्थ रखना, पाचन शक्ति एवं भूख में वृद्धि करना, प्रजनन क्षमता बनाये रखना, रोग रोधक शक्ति पैदा करना आदि में कार्य करता है। हरा चारा, दाना, खलियॉ आदि इसके प्रमुख स्रोत हैं। ।

### पानी

पशु शरीर में लगभग 75 प्रतिशत पानी होता है, एक सामान्य पशु के लिये 35–40 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। जो दूध बनाना, पोषक तत्वों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाना, रक्त निर्माण, शरीर का तापक्रम, पाचन शक्ति बढ़ाना आदि में कार्य करता है। हरा चारा एवं स्वच्छ पानी इसके प्रमुख स्रोत हैं।

अतः पशुओं को स्वस्थ रखने के लिये सम्पूर्ण तत्वों युक्त भोजन एक निश्चित अनुपात एवं मात्रा में खिलायें। विभिन्न प्रकार के पशुओं के लिये अलग–अलग प्रकार का पशु आहार देना चाहिये।

### पशु आहार

पशु आहर का वर्गीकरण इनमें पाये जाने वाले तत्वों के आधार पर निम्न प्रकार से किया जाता है।

### आहर / खाद्य पदार्थ

संतुलित पशु आहार न केवल पशु की जरूरतों को पूरा करता है, बल्कि यह दुग्ध उत्पादन की लागत को भी कम करता है। दूध देने वाले पशुओं को पोषण की जरूरत तीन कारकों के लिये होती हैः शरीर की यथा स्थिति को बनाये रखने के लिये, दुग्ध उत्पादन की आवश्यकता को पूरी करने के लिये तथा गर्भावस्था के लिये। अतः पशुओं का आहार इन तीन जरूरतों को ध्यान में रखकर बनाना चाहिये, जिससे पशु स्वस्थ रहे, अधिक उत्पादन दे तथा अगली पीढ़ी के लिये स्वस्थ बच्चे को जन्म दे सके।

| रेशेदार चारा | | दाना मिश्रण | |
|---|---|---|---|
| सूखा चारा | हरा चारा | शाकीपूरक | प्रत्याभीन पूरक |
| भूसा, कड़वी | हरे चारे | दानें, खली | वनस्पति उत्पन्न |
| सूखी घास | साइलेज | मूल जड़ें | जैविक स्रोत |
| हे | चारागाह | दाना / दाल छिलका | समुद्री स्रोत |

### थम्ब नियम

गाय को 2.5 किग्रा दुग्ध उत्पादन पर 1 किग्रा दाना। भैंसों को 2 किग्रा दुग्ध उत्पादन पर 1 किग्रा दाना।

पशुओं का आहार व दाना मिश्रण तैयार करते समय विशेष बातों को ध्यान में रखना चाहिये। सबसे पहले पशु की अवस्था के आधार पर शुष्क पदार्थ, प्रोटीन, व कुल पाच्य तत्वों का निर्धारण करें। इसके बाद शुष्क पदार्थ के आधार पर विभिन्न आहारिक पदार्थ जैसे दाना, हरा चारा, सूखा चारा, आदि की मात्रा निर्धारित करें। जो मात्रा शुष्क पदार्थ के आधार पर आये उससे यह देख लें कि प्रोटीन, कुल पाच्य पदार्थ कितने मिल रहे हैं। आहार में तत्वों की मात्रा व पशु की कुल

आवश्यकता देखकर निर्धारित करें। यदि किसी तत्व की मात्रा कम हो तो उसकी पूर्ति करने के लिये सबसे सस्ते आहार का इस्तेमाल करें यदि किसी तत्व की मात्रा ज्यादा हो तो उसे सबसे मंहगे आहार की मात्रा कम करें।गाय एवं भैंसों के पाचन तंत्र के सामान्य रूप से काम करने के लिये चारे की न्यूनतम मात्रा आवश्यक है। चारे की अधिक मात्रा खिलानी चाहिये जिससे रातिब, दाना की मात्रा कम खिलानी पड़े। उत्तम चारे जैसे बरसीम, लूसर्न, मक्का आदि भरपेट देने से दाना मिश्रण की मात्रा कम की जा सकती है। कुल बरसीम या उसके साथ 1–2 किलो भूसा खिलाने से 8–10 लीटर दूध का उत्पादन प्रतिदिन ले सकते हैं।

## दाना मिश्रण तैयार करना

दाना मिश्रण तैयार करते समय इन बातों का ध्यान रखें कि तैयार दाना मिश्रण में प्रोटीन 14–16 प्रतिशत तथा कुल पाच्य तत्व कम से कम 65–68 प्रतिशत हो, अतः निम्न अनुपात में ही दाना मिश्रण बनायें।

| अवयव | मात्रा प्रतिशत |
|---|---|
| खली | 25–35 |
| मोटे अनाज | 25–35 |
| चोकर, चुन्नी, भूसी | 10–30 |
| खनिज लवण | 2 |
| नमक | 1 |

दूध देने वाले पशुओं को कौन–कौन से चारे एवं दाने देने चाहिये और कौन से नहीं देने चाहिये वह निम्नलिखित है।

## दूध देने वाले पशुओं को खिलाने योग्य चारे

(1) लूसर्न और बरसीम ये दोनो तरह के चारे स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोगी हैं। इसमें प्रोटीन की मात्रा 15–20 प्रतिशत होती है।

(2) दूब, हलीम, और झरूआ आदि अन्य प्रकार की घासें अच्छी होती हैं। इनमें दूब सर्वश्रेष्ठ है। झरूआ भी एक अच्छी और दानेदार घास है।

(3) जौ तथा जई की चरी ये पौधे दुग्ध वर्धक हैं। जौ का भूसा सूखा भी खिलाया जा सकता है। किन्तु जई का भूसा कम अच्छा होता है।

(4) ज्वार की चरी यह चारों में सर्वोत्तम है, क्योंकि इसे हरी, सूखी या साइलेज रूप में सभी तरह से खिलाते हैं। परन्तु हरी चरी ही उत्तम चारा माना जाता है।

(5) मक्का गर्मी के दिनों में साइलेज के अतिरिक्त यही एक हरे चारे के रूप में उपलब्ध हो सकती है जिसे पानी व बीज का प्रबन्ध करके चैत महीने में बोवाई कर दें और ज्येष्ठ से भाद्र पद तक ग्वार और लोबिया के पौधों के साथ मिलाकर खिलायें।

(6) ग्वार और लोबिया चैत से भादों तक इसे बोयें और मक्के की चरी के साथ खिलायें।

(6) सरसों की चरी हरी नरम सिंगरीदार सरसों को दूसरे चारों के साथ मिलाकर खिलाने पर दूध की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है एवं गर्म तासीर होती है।

(7) मटर नर्म फलियों के भर आने पर इसे खिलायें। इसमें कार्बोहाइड्रेट प्रचुर मात्रा में होता है । इसे जौ आदि के चारे भूसे के साथ मिलाकर खिलाना अच्छा रहता है।

(8) चना और मसूर चने के पौधे में क्षार की बहुत अधिकता होने के कारण इसे दूसरे चारों के साथ मिलाकर ही खिलाना चाहिये।

(9) उर्द और मूँग इसे भादों से कार्तिक माह के बीच बोना चाहिये और नरम फल लग जाने के बाद अन्य चारों के साथ मिलाकर खिलायें। क्योंकि इसमें प्रोटीन की मात्रा बहुत अधिक होती है जो दूध की पौष्टिकता को बढ़ाता है।

## दूध देने वाले पशुओं को खिलाने योग्य दाने

(1) गेहूँ का दलिया और चोकर बहुत ही उपयोगी होता है।

(2) खलीः सरसों और लाही, तिल, मूँगफली, अलसी तथा बिनौले आदि की खली को खिलाने से दूध की मात्रा एवं पौष्टिकता में वृद्धि होती है।

(3) चने का दाना और चुनी मिली हुई भूसी, अरहर की चुन्नी भूसी, मूँग की चूनी भूसी, मसूर की चूनी भूसी इन सभी को मिलाकर खिलाना

चाहिये क्योंकि इन सभी में प्रोटीन प्रधान तत्व अत्यधिक होते हैं और भूसी में फास्फोरस का काफी अंश होता है जो दूध की उत्पादन क्षमता बढ़ाने में सहायक होता है।

(4) जौ का दलिया खिलाना अत्यन्त लाभकारी माना जाता है।

(5) पकाई हुई चीजें जैसे दाल का पानी, चावल का माड़ रोटी और थेड़ा सा दलिया भी दिया जाना चाहिये।

(6) गुड़ और शीरा थोड़ा मात्रा में खिलाना हितकर होता है।

(7) कुछ मात्रा में ग्वार को दलकर और उबालकर या भिगोकर देना चाहिये।●

---

(पृष्ठ 21 का शेष)

फफूंदी उग आती है। ये कीट फरवरी से अक्टूबर तक अधिक सक्रिय रहते हैं।

**रोकथाम**

इसके नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस 40 ई.सी. की 1.25 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

डायमेथोएट 30 ई.सी. दर 1.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

### (5) आम तना बेधक की रोकथाम

इसकी गिडारे तने में सुरंग बना देती हैं। जिससे पेड़ कमजोर हो जाता है। अधिक प्रकोप की दशा में पेड़ सूख जाता है।

**रोकथाम**

इस कीट के नियंत्रण के लिए मिट्टी का तेल या पेट्रोल रुई में भिगोकर छिद्र में डालकर छिद्र को गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहिए।

### (6) फलों में आंतरिक सड़न का निदान

इसके नियंत्रण के लिए 6–8 ग्राम बोरेक्स (सुहागा) प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(7) बाग की नियमित (7–8 दिन के अंतराल पर) सिंचाई करते रहें।

(8) अमरूद की बागवानी में किसान भाई निराई–गुड़ाई करके खरपतवार नष्ट कर दें।

(9) अमरूद के तनों के पास से बहुत से अन्तः थूस्तारी (सकर्स) निकलते रहते हैं। उन्हें निकालते रहना चाहिए।

(10) अमरुद के निरूपित बागों में 3–4 वर्ष तक हरी खाद के लिए गर्मी में सनई/ढैंचें की फसल लेना चाहिए।

(11) लीची की बागवानी में फल को बचाने के लिए फल बनने के बाद से लगातार आर्द्रता (नमी) बनाए रखने के लिए जल्दी–जल्दी सिंचाई करते रहना चाहिए। इस समय पानी की कमी नहीं होनी चाहिए, अन्यथा फलों के झड़ने व फटने का भय रहता है।

### (12) लीची का विगलन रोग

इस रोग का प्रकोप फलों के पकने के समय होता है छिलके का रंग हल्का भूरा तथा बाद में गहरा भूरा हो जाता है।

**नियंत्रण**

इसको रोकने के लिए फलों को पकने से 20–25 दिन पूर्व कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल कर छिड़काव करना चाहिए।●

# कार्प मछलियों का कृत्रिम विधि द्वारा बीज उत्पादन

डॉ0 प्रमोद कुमार एवं प्रो0 ए0 पी0 राव

भारत एक विकासशील देश है। यहां मत्स्य पालन एक उघोग का रूप ले चुका है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के साथ मात्स्यिकी का योगदान भी अहम है। बदलते परिदृश्य में इनका विकास बहुआयामी हुआ है। जो रोजगारोन्मुख एवं आर्थिकोपार्जन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आज जरूरत है कि नई विकसित तकनीक का उपयोग कर मत्स्य व्यवसाय में अधिक से अधिक लाभ कमाया जा सके।

उत्तर प्रदेश एक बडा अर्न्तस्थलीय राज्य है यंहा उपलब्ध जल संसाधनों में लगभग 1.62 लाख हेक्टेयर क्षेत्र तालाब व पोखरों के रूप में है। इन जल संसाधनों का उपयोग खाने योग मछली का उत्पादन,मत्स्य बीज उत्पादन एवं रगीन मछलियों का उत्पादन किया जा सकता है। सफल मत्स्य उत्पादन के लिए उचित गुणवत्ता का मत्स्य बीज उपलब्ध होना अनिवार्य है। मत्स्य बीज उत्पादन की तकनीकी विधा वर्णित है।

## प्रजनक मछली हेतु तालाब प्रंबधन

प्रजनक मछलियों को रखने के लिए 0.2 –0.5 हेक्टेयर का चौकोर तालाब जिसकी औसत गहराई 1.5 मी0 का होना चाहिए। प्रजनक तालाब में हानिकारक जलीय परभक्षी एवं अवांछनीय जलीय पौधे (खरपतवार) को निकाल देना चाहिए। परभक्षी एवं अवांक्षनीय मछलियों के उन्मूलन हेतु विभिन्न विषों का प्रयोग किया जाता है। इनका मात्रा प्रभाव अवधि अग्रतालिका में अंकित है। इनका प्रयोग प्रातः सूर्योदय के समय करना चाहिए।

**सारिणी–1**
**अवांछनीय मछलियों के उन्मूलन हेतु प्रयोग में आने वाले विष**

| मत्स्य विश का नाम | मात्रा कि0ग्रा0/हे0/मी0 गहराई | प्रभाव अवधि |
|---|---|---|
| जमालगोटे के बीजों का पाउडर | 30–50 | 15–20 |
| महुआ की खली | 2500 | 15–20 |
| इमली के बीज | 1750–2000 | 7–10 |
| ब्लींचिंग पाउडर | 300–1000 | 7–20 |

## प्रजनक मछली का चुनाव व संचयन

गुणवत्ता युक्त मत्स्य बीज के उत्पादन हेतु सर्व प्रथम मत्स्य प्रजाति जैसे भारतीय कार्प मछली (रोहू, कतला तथा नैन/मृगल) व चाइनीज कार्प (सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प,कामन कार्प) जो कि मत्स्य पालको द्वारा मुख्तया पाली जाती है। मत्स्य पालक/बीज उत्पादक वैसी मछली का चयन करें जिसका बजार मूल्य ज्यादा हो। मछली की प्रजाति का चयन करने के बाद गुणवत्ता युक्त प्रजनक का चयन करें। ऐसे प्रजनक जो स्वस्थ हो, जिनका समुचित विकास हुआ हो, किसी परजीवी विषाणु, जीवाणु से ग्रस्त न हो तथा एक वर्ष से ज्यादा के हो, इस प्रकार की मछलियों का चयन हम प्रजनक के रूप में कर सकते हैं। तालाबों में 1500 कि0ग्रा0/हे0 की दर से विभिन्न प्रजाति की मछलियों जैसे कतला, रोहू ,मृगल, ग्रास कार्प सिल्वर कार्प का 2:3:2:2:1 क्रमशः के अनुपात में संचयन करना चाहिए।

## प्रजनक मछलियों की पहचानः

प्रजनक मछलियों में नर व मादा की पहचान करने हेतु विवरण सारणी–2 में दर्शाया गया है।

## प्रजनक आहार प्रबन्धन

प्रजनक मछलियों को समुचित पोषण अतिआवश्यक है। इनके वजन (शारीरिक भार) का 2–3 प्रतिशत भोजन प्रतिदिन दो विभिन्न समयों में नियमित पूर्वक दें। भोजन के मुख्य अवयव जैसे प्रोटीन, वसा, व कार्बोहाइड्रेट आदि का प्रजनक एवं उनसे उत्पादित बीजों पर बहुत प्रभाव पडता है। प्रोटीन मछली के भ्रूण के विकास एवं जीरों के अंगो के विकास में मुख्य भूमिका निभाता है। नर प्रजनको के आहार में आर्गीनीन एमिनो अम्ल का होना अतिआवश्यक है। क्योकि नर के वीर्य में प्रोटामिन पाया जाता है। जो कि आर्गीनीन की सहायता से बनता है। यह नर प्रजनक

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, मात्स्यिकी, कृषि विज्ञान केंद्र, बलरामपुर, 2. निदेशक प्रसार, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौ. वि. वि., कुमारगंज, अयोध्या

**सारिणी–2**
**प्रजनक मछलियों की पहचान**

| लिंग धारण करने के तरीके | मादा प्रजनक | नर प्रजनक |
|---|---|---|
| पंख एंव त्वचा | मादा प्रजनक का अगला पंख (पैक्टोरलफिन) व सर की त्वचा चिकनी एंव पंख के प्रथम काटे की मोटाई कम होती है। | नर प्रजनको के अगले पंख का प्रथम काटा मोटा तथा निचला हिस्सा व सर का भाग खुरदुरा होता है। |
| पेट | मादा प्रजनक का पेट अगले पंख से जननेन्द्रिय छिद्र तक उभरा हुआ एंव मुलायम होता है। | नर प्रजनक का पेट कठोर, बीच में दबा हुआ एवं नाली जैसा संरचना दिखाई पड़ती है। |
| जननेन्द्रिया (मल छिद्र के पूर्व का भाग) | मादा प्रजनक की जननेन्द्रिय छिद्र लाल, उभरी हुई बाहर की तरफ निकला होता है। | नर प्रजनक का जननेन्द्रिय भाग ललिमा लिये हुये सामान्य होता है |
| लैगिक उत्पाद | मादा प्रजनक के उभरे भाग (पेट) को हल्का सा दबाने पर अण्डे जननेन्द्रिय छिद्र से बाहर निकलते है। | नर प्रजनक के पेट वाले भाग को हल्का सा दबाने पर दूधिया रंग जैसा चिपचिपा पदार्थ (मिल्ट )निकलता है। ( कभी–कभी नर भाकुर में बिना इजेक्शन दिये मिल्ट नही निकलता है) |

के वीर्य को अधिक गुणयुक्त बनाता है। वसा (अंसतृप्त) मछली के भ्रूण के दिमाग एवं मेरूरज्जु के विकास मे सहायक हेाता है तथा कार्बोहाईड्रेट उर्जा प्रदान करती है। मत्स्य आहार में प्रोटीन 33से 35 प्रतिशत वसा 10–15 प्रतिशत होनी चाहिए। मत्स्य आहार जिसको किसान भाई खुद बना सकते है, उनके मुख्य अवयव इस प्रकार है। जिन्हे सारणी –3 में दर्शाया गया है।

**सारिणी–3**
**मत्स्य आहार हेतु प्रमुख अवयव**

| अवयव | मात्रा प्रतिशत में |
|---|---|
| चावल का कना | 25–30 |
| मूंगफली की खली | 30–33 |
| सोयाबीन | 15–20 |
| मत्स्य चुर्ण | 07–10 |
| विटामिन व खनिज मिश्रण | 01–02 |
| वनस्पति तेल | 1.5–03 |
| मछली का तेल | 0.5–1.0 |

उपर्युक्त अवयवों को वजन के बराबर मात्रा में मिला कर पानी के साथ गूथ लें इसके गोले बनाकर पानी में जगह –जगह छिद्र युक्त बोरी में बांध कर बांस या अन्य किसी चींज के सहारें पानी के विभिन्न गहराई पर लटका दें।

## प्रजनको का उत्प्रेरित प्रजनन एंव प्रजनन कालः

कार्प मछलियों का प्रजनन काल प्रजातिवार विभिन्न समय में होता है। भारतीय मूल की मत्स्य प्रजातियों में भाकुर का प्रजनन काल मई –जून एंव रोहू व नैन का मई–अगस्त होता है। जबकि विदेशी कार्प मछलियों में सिल्वर कार्प व ग्रास कार्प का प्रजनन काल फरवरी से मई का उपयुक्त होता है।

मत्स्य बीज उत्पादन कार्य के लिए अभी तक पीयूष ग्रन्थि का उपयोग प्रचलित था। इसमे मादा प्रजनक को 3–5 मिली0 / किग्रा0 शरीर भार से प्रथम इजेक्शन लगाने के उपरान्त अलग टैंक या हापा में रखते थे फिर 6 घण्टे पश्चात दुबारा दूसरा इजेक्शन 5–6 मिली0 / किग्रा0 का लगाते समय नर प्रजनक को भी 2–3 मिली / किग्रा0 शरीरभार से इजेक्शन लगाकर दोनो प्रजनको को प्रजनन हेतु सेर्कुलर टैक में रख दिया जाता था, किन्तु उच्च कोटि के पीयूष ग्रन्थि का अभाव, इनके रख रखाव का महंगा होना इत्यादि के कारण अब कृत्रिम हारमोंस जैसे ओवाप्रिम, ओबाटाइड एंव वोवा–एफ0एच0 का 0.2 –0.3 व 0.3 – 0.5 मिली0 / किग्रा0 दर से नर एंव मादा प्रजनक मछली में प्रयोग किया जाता है।

सामान्तया इन कृत्रिम हारमोन्स का सिर्फ एक इन्जेक्शन प्रजनक मछलियों को शाम के समय दिया जाता है, जब मौसम कुछ ठंडा हो ।यदि प्रजनक मछलियों के शरीरभार में असमानता है तो कृत्रिम हारमोन्स इजेक्शन देने के उपरान्त नर एंव मादा को 1:2 या 2:1 ( जैसी स्थिति हो) के अनुपात से इजेक्शन देने के बाद हापा या सर्कुलर हैचरी में रखा जाता है, जिसमे 6–8 घंटो बाद अंडो का उत्सर्जन हो जाता है। उत्सर्जित निशेचित अंडो को हैचिग पूल में डाल दिया जाता है जहां 6से 8 घण्टों में अंडो से बच्चे

प्राप्त हो जाते है, किन्तु प्रजनन के समय जल की गुणवत्ता हेतु तापमान 27–29°C, घुलित आक्सीजन 5पी0पी0एम0 से ज्यादा, पी0एच06.2 से 7.6 तथा अमोनिया 0.01 पी0पी0एम0 से कम एंव आस –पास का माहौल शांत होना चाहिए

**मत्स्य बीज का रख–रखाव :**

हैचिग पूल से मत्स्य बीजो को 72 घण्टे बाद नर्सरी तालाब में स्थानान्तरित कर दिया जाता है तदोपरान्त चौथे दिन से सरसों की खली एवं चावल का कना (1:1भार के हिसाब से ) पानी में भिगो कर बीज के वजन का चार गुना पांच दिनो तक देते है। 6से 12 दिन की अवधि मे भोजन की मात्रा दुगुनी कर देते है । उसके बाद इन मत्स्य बीजो का पालन हेतु विपणन किया जाता है।

मछली के उत्पादन मे मत्स्य बीज, भोजन एवं जलीय गुणवत्ता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उच्च गुणवत्ता के मत्स्य बीज का अभाव अत्यधिक या कम मत्स्य बीज का संचयन, अवांछनीय कीट व मछलियों का प्रकोप, मिट्टी, जल एवं भोजन का सही प्रबंधन न होना इत्यादि मछली उत्पादन मे कमी के प्रमुख कारण हैं। इस कमी को पूरा करने के लिए निम्न तरीके अपनाने चाहिए।

## नर्सरी तालाब

नर्सरी तालाब का उपयोग मछलियों के बहुत छोटे बच्चों (स्पान) को शिशुमीन (फ्राई) अवस्था तक लाने व सुरक्षा प्रदान करने हेतु किया जाता है जिससे स्वस्थ एवं पाली जाने वाली शुद्ध प्रजाति के मत्स्य बीज को तालाबों मे संचय कर मत्स्य उत्पादन बढ़ाया जाता है।

## नर्सरी तालाब के आकार एवं प्रकार

ऐसे तालाब जो गर्मियों मे प्रायः सूख जाते हों ज्यादा उपयुक्त माने जाते है। नर्सरी तालाब का क्षेत्रफल 0. 02–0.06 हे0 (4 गुणा 1.5 गुणा 1.25) मीटर होता है। नर्सरी तालाब आयताकार तथा बाढ़ से प्रभावित नही होने चाहिए।,

## तैयारी

ऐसे नर्सरी तालाब जिनके अन्दर व किनारे पर जलीय व स्थलीय पौधे जैसे–जलकुम्भी, हाथीघास आइपोमिया, लेमना, एजोला, वैलिसनेरिया, गड़रा, सरपत आदि प्राकृतिक रूप से उग जाते हैं, जो विभिन्न प्रकार के कीड़ों को आश्रय देने के साथ संचित मत्स्य बीज को खा जाते हैं, इन घासों को पूर्णरूप से जाल चलाकर सफाई कर देते हैं।

यदि नर्सरी तालाब मे अनावश्यक मछलियां एवं कीड़े जैसे–सिधरी, डिड़वा, गिरई, सौर, सौरी, सिंहीं, पहिन, भाकुर, झींगा, केकड़ा, कछुआ, जल विच्छू, जलीय खटमल, गोताखोर कीट आदि हो तो इस का पूर्ण निष्कासन निम्न दो विधियों द्वारा किया जाता है।

## भौतिक विधि

स्पान डालने से एक या दो दिन पूर्व महीन कपड़े के जाल से तालाब मे बार–बार चलाकर जलीय कीड़ो व आवांछनीय मछलियों को निकाल दिया जाता है।

## रसायनिक विधि

जाल चलाने के उपरान्त बचे हुए जलीय कीड़ो व अवांछनीय मछलियों को मारने के लिए विषैला पदार्थ जैसे–महुआ की खली 200 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से प्रयोग करने से मछलियां 4–6 घंटो में मर कर पानी की उपरी सतह पर आ जाती हैं, जिसे खाने के प्रयोग में लेते हैं , इसका विषैलापन तालाब मे लगभग पन्द्रह से बीस दिन तक रहता है। इसके अलावा जलीय कीड़ो को मारने के लिए 18 किग्रा0 सस्ते साबुन तथा 56 किग्रा0 वनस्पतिक तेल को मिला कर प्रति हे0 की दर से नर्सरी तालाब मे छिड़काव ऐसे समय पर करते हैं, जब तेज हवा न चल रही हो। इससे पानी की ऊपरी सतह पर एक पतली तैलीय परत बन जाने से बचे हुए कीड़े ऊपरी सतह से श्वसन नही कर पाते हैं और कुछ ही घण्टों मे उनकी मृत्यु हो जाती है।

## बीज संचय

स्पान (जिनका आकार 0.6 – 0.75 सेमी, 0.0014 ग्राम भार) को प्रातः काल या सायं काल 1.5–2.5 मिलियन प्रति हे0 की दर से 2 – 3 सप्ताह के लिए नर्सरी तालाब में संचय कर देते हैं, पन्द्रह दिन के अन्तराल पर मत्स्य बीज फ्राई अवस्था (जिनका आकार 2–3.5 सेमी, 0.15– 0.75 ग्राम भार ) मे पहुॅच जाते हैं। जिससे लगभग 87.3 प्रतिशत तक जीवित मत्स्य बीज दो से तीन सप्ताह मे प्राप्त हो जाते हैं।

(शेष पृष्ठ 33 पर)

# मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन

डा0 रणधीर नायक एवं प्रो0 आर0आर0 सिंह

## मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन का मूल सिद्धान्तः

मृदा उर्वरता का संतुलन इस प्रकार किया जाय कि फसल की मांग एवं आवश्यकता के अनुसार पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध होते रहें, जिससे आधिक से अधिक (वांक्षित) उपज मिल सके और मृदा स्वास्थ्य सुरक्षित बना रहे। इसके लिए आवश्यकतानुसार अकार्बनिक एवं कार्बनिक स्रोतों से फसल को सभी तत्वों का निश्चित अनुपात में ग्रहण करना आवश्यक है, क्योंकि प्रत्येक तत्व का पौधों के अन्दर अलग–अलग कार्य एवं महत्व है जो विभिन्न अवस्थाओं में पूर्ण होता है। कोई एक तत्व दूसरे तत्व का पूरक नही है। यह संतुलन बिगड़ने पर उत्पादन सीधे प्रभावित होता है। इस व्यवस्था/तकनीकी को एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की संज्ञा दी गई है।

मृदा के जीवांश में लगातार हो रहे ह्रास से मृदा में भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं में इस प्रकार पतिवर्तन हुआ की देश की बढ़ती आबादी के सापेक्ष खाद्यान्नोत्पादन पर प्रश्न चिन्ह लग गया। हाल के अनुसंधान में पाया गया कि गोबर की खाद/हरी खाद या गेहूँ के भूसे द्वारा कुल पोषक तत्वों के 50–75 प्रतिशत आपूर्ति से फसल प्रणाली की उपज में वृद्धि होती है तथा उर्वरता बनी रहती है। प्रारम्भ में जब रासायनिक उर्वरक उपलब्ध नही थे, खेती में जैविक खादों का प्रयोग मुख्य रुप से किया जाता था जिससे कृषि उत्पादन अपेक्षित स्तर तक नही पहुँच पाता था परन्तु 60 के दशक में जब हरित क्रान्ति का उद्भव हुआ, उर्वरकों का प्रयोग धीरे–धीरे बढ़ता गया जिससे उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई। प्रारम्भ में प्रमुख पोषक तत्वों में केवल नत्रजनिक उर्वरकों का प्रयोग हुआ लेकिन धीरे–धीरे फास्फेटिक उर्वरकों के महत्व को समझते हुए इनका प्रयोग भी होने लगा, परन्तु अन्य आवश्यक पोषक तत्वों तथा मैग्नीशियम, सल्फर, जिंक, आयरन, कापर, मैंगनीज, मालिब्डेनम तथा बोरान एवं क्लोरीन की मिट्टी में कमी होती रही फलस्वरुप इन तत्वों की पौधों को आवश्यकतानुसार उपलब्धता न होने से अधिकांश क्षेत्रों में उत्पादन में ठहराव आ गया तथा उत्पादन में भी कमी देखी गई।

## मृदा स्वास्थ्य हेतु पोषक तत्व प्रबंधन क्यों ?

उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए, उत्पादकता में निरंतरता बनाए रखनें के लिए, उत्पाद को लाभदायक बनाए रखनें के लिए, वातावरण को बचाए रखनें के लिए तथा कुपोषण से बचाव के लिए मृदा स्वास्थ्य हेतु पोषक तत्व प्रबंधन आवश्यक है।

## मृदा स्वास्थ्य हेतु एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

पोषक तत्वों के सभी स्रोत (रासायनिक उर्वरक, जैविक एवं जीवाणु खाद) का संतुलित, समुचित एवं समयानुकुल प्रयोग कर सब्जियों, फल–फूल एवं औशधीय फसलों से उच्च उत्पादकता निरंतर पाने की प्रबंधन तकनीक जिससे मृदा एवं पर्यावरण को हानि न पहुँचे ''एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन'' कहलाती है।

## कृषि में मृदा स्वास्थ्य हेतु एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन से लाभ :

- अधिकतम पैदावार प्राप्त करना।
- पोषक तत्वों को बर्बादी से बचाना।
- विशैलापन तथा प्रतिक्रियाओं से बचना, किसी एक तत्व की अधिकता भी विशैलापन पैदा करती है।
- मृदा की उत्पादकता एवं स्वास्थ्य बनाए रखना।
- गुणात्मक उत्पादन।
- वातावरण की विपरीत परिस्थितियों से बचाव।
- कीड़े मकोड़े के प्रभाव को प्राकृतिक तौर पर कम करना।
- लाभ लागत अनुपात में वृद्धि।

## एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन हेतु सुझाव :

1. मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही उर्वरकों एवं जैविक

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, विषय वस्तु विशेषज्ञ पादप प्रजनन कृषि विज्ञान केंद्र वाराणसी, 2. निदेशक प्रसार, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौ. वि. वि., कुमारगंज, अयोध्या

खादों का प्रयाग करें।

2. दलहनी फसलों में राइजोबियम कल्चर का प्रयोग अवश्य करें।
3. धान व गेहूँ के फसल चक्र में ढैंचा की हरी खाद का प्रयोग करें तथा फसल चक्र में परिवर्तन करें।
4. आवश्यकतानुसार उपलब्धता के आधार पर गोबर तथा कूड़ा करकट का प्रयोग कर कम्पोस्ट बनाई जाय।
5. खेत में फसल अपशिष्ट जैविक पदार्थों को मिट्टी में मिला दिया जाय।
6. विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों तथा नत्रजनिक संष्लेशी फास्फेट को घुलनशील बनाने वाले बैक्टिरियल, अल्गल तथा फंगल बायोफर्टिलाइजर का प्रयोग करें।
7. कार्बनिक जीवांश तथा अकार्बनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग करें।

**एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के घटक :**

**क.उर्वरक**

**ख. जैविक खाद**

कम्पोस्ट, एफ.वाई.एम., केंचुआ खाद, हरी खाद, फसलों के अवशिश्ट, जानवरों के न खाये जाने योग्य खली (रेड़ी, महुआ, करंज, नीम, अरंडी इत्यादि), अजोला तथा पौधों के अपशिष्ट आदि।

**ग. जीवाणु खाद**

राइजोबियम (दलहनी फसलों के लिए), नील हरित शैवाल, एजोस्पाइरीलम, एजोटोबैक्टर तथा फास्फेट घोलक जीवाणु।

घ. कृषि आधारित अवशेषों के अपशिष्ट, गन्ने एवं कागज से निकला अवशिश्ट

ङ. खनन एवं औद्योगिक अवशिश्ट

1.चूना पत्थर, 2. प्रेसमड, 3. जिप्सम, 4. फॉस्फोजिप्सम

फसलों में जैविक खाद एवं फसलों के अपशिष्ट का महत्व

जैविक खाद एवं फसलों के अपशिष्ट फसलों को मुख्य, द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों को प्रदान करते हैं। फसलों में इनका महत्व जैसे पोषक तत्वों के भंडारीकरण में सहायक, मिट्टी में जीवांश की मात्रा में वृद्धि करना, मिट्टी में पोषक तत्वों के निक्षालन को रोकना, मिट्टी के भौतिक गुणों जैसे– जल धारण क्षमता, आक्सीजन का आवागमन, मिट्टी के भारीपन में कमी करना, मिट्टी को गर्म रखना इत्यादि के सुधार में सहायक, मिट्टी के रासायनिक गुणों के सुधार में सहायक, मिट्टी के जीवाणु जनित गुणों का विकास करना एवं उर्वरकों की दक्षता में वृद्धि करना आदि में पाया जाता है। जिसका प्रबन्ध निम्न प्रकार किया जा सकता है

**1.वेस्ट डिकम्पोजर द्वारा अवशेष/कचरा प्रबन्धन–**

वेस्ट डिकम्पोजर लाभकारी सूक्ष्म जीवों का एक समूह है, जो कृषि, पशु और रसोई आदि से उत्पन्न सभी प्रकार के कचरे की 40 दिनों के भीतर उपयोग करने योग्य खाद के रूप में परिवर्तित करने में सक्षम है। वेस्ट डिकम्पोजर जैव उर्वरक, वायो कन्ट्रोल और साथ ही मिट्टी स्वास्थ्य पुनखद्धारक के रूप में काम करता है। यह अन्य प्रकार से भी जैसे कि, सभी प्रकार के कृषि और वागवानी फसलों में रोगों से लड़ने के लिये, जैव कचरे की शीघ्र कम्पोस्टिंग, ड्रिप सिंचाई, पत्तों पर छिड़कन के लिये व जैविक कीटनाशक के रूप में तथा फसल के अवशेषों की कम्पोस्टिंग के साथ–साथ बीज उपचार के लिये भी प्रयोग किया जा सकता है।

**बनाने का तरीका–**

- दो किग्रा गुड़ लेकर इसे 200 ली0 पानी भरे प्लास्टिक ड्रम में मिला लें।
- अब वेस्ट डिकंपोजर की बोतल में उपस्थित सामग्री को गुड़ वाले प्लास्टिक ड्रम में डाल दें।
- ड्रम में डिकंपोजर की अच्छी तरह खोलने के लिये एक लकड़ी की छड़ी से इसे ठीक तरह मिलाए।
- ड्रम को ढ़क दें और प्रतिदिन इसे एक–दो बार हिला दें।
- पाँच दिनों बाद ड्रम में मौजूद घोल की उपरी सतह झागदार, और घोल दूधिया हो जायेगा।

**नोट**

किसान उपर्युक्त घोल से बार–बार वेस्ट डीकम्पोजर का निर्माण कर सकते हैं। इसके लिए 20 लीटर वेस्ट डीकंम्पोजर घोल का दो किग्रा गुड़ के साथ ड्रम में 200 लीटर पानी में मिला दें फिर से यह सात दिनों में तैयार हो जायेगा।

**शीघ्र कम्पोस्टिंग–**

एक बोतल द्वारा वेस्ट डीकंपोजर से आगे बनाये गये डीकंपोजर का उपयोग जैव कचरे को विघटित करके जैविक खाद तैयार करने के लिये किया जाता है।

- एक टन जैव कचरे, जैसे कृषि, रसोई, गाय का गोबर आदि की 18–20 सेमी मोटी परत जमीन पर ढेर कर दी जाती है।
- वेस्ट डीकम्पोजर के घोल के साथ कचरे को गीला कर दें।
- जैव कचरे की एक 18–20 सेमी मोटी परत बनाई जाती है और वेस्ट डीकम्पोजर के घोल से दोबारा गीला कर देते है।
- जब तक कि 30–45 सेमी की मोटी परत न बन जाये, ऊपर की प्रक्रिया दोहराते रहें।
- समान कम्पोस्टिंग के लिये हर सात दिनों के अंतराल पर ढेर को उलट–पलट करते रहें और इस ढ़ेर पर हर बार वेस्ट डीकम्पोजर का घोल डालते रहें।
- कम्पोस्टिंग की पूरी अवधि के दौरान 60 प्रतिशत नमी बनाये रखें, यदि आवश्यक हो तो और घोल मिला दें।
- कम्पोस्ट खाद 40 दिनों उपरान्त उपयोग करने के लिये तैयार होती है।

**खेत में फसल अवशेषों की कम्पोस्टिंग–**

- फसल कटाई के बाद पानी भरे खेत में फसल के डंठल पर घोल का छिड़काव करने के बाद कुछ दिनों तक छोड़ दिया जाता है।
- जल की कमी वाले खेतों में फसल के अवशेषों पर डीकम्पोजर घोल छिड़कते है और जब किसान खेत में सिंचाई करता है, तो विघटन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है।
- 200 ली0 घोल को एक एकड़ खेत में फसल अवशेषों पर इन–सिटू कम्पोस्टिंग के लिये प्रयोग किया जा सकता है।

**2.केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट) निर्माण में उपयोग–**

केंचुआ खाद निर्माण हेतु फसल अवशेषों के विधिवत गोबर के साथ उचित मात्रा में वैज्ञानिक विधि से मिलाकर केंचुआ खाद बनायी जाती है, ताकि अवशेषों को खाकर केंचुए गुणवत्तापूर्ण केंचुआ खाद बन सके।

**3.नाडेप कम्पोस्ट का निर्माण–**

फसल अवशेषों से नाडेप कम्पोस्ट बनाने हेतु 10 फुट लम्बी, 6 फुट चौड़ा तथा 3 फुट ऊंचा ईट का जालीदार ढांचा। टैंक बनाकर निचले हिस्से में फर्श बना देते है। टैंक में सर्वप्रथम 6 इंच मोटी अवशेषों की परत बिछाते है। उस पर 0.5 सेमी मिट्टी की परत डालते है तथा इसमें 5 किग्रा0 गोबर को 100 ली0 पानी में घोलकर अवशेषों की परत को भिगोते है। यह प्रक्रिया अपनाकर टैंक को ऊपर तक भर देते है। 100–110 दिनों में उपयोग हेतु लगभग 35 कु./टैंक खाद तैयार हो जाती है।

**4.जैविक खेती में उपयोग–**

आज जैविक उत्पादों के प्रति आकर्षण देश दुनिया में तेजी से बढ़ रहा है, जैविक उत्पादन में फसल अवशेषों टिकाऊ पादप पोषण व्यवस्था के सुनिश्चित करते है।

**5.जैव उर्वरक निर्माण में उपयोग–**

अनेक फसल अवशेषों के विघटित कराकर उनसे जैव उर्वरकों के बनाने में मदद मिलती है, जैसे गन्ने से जूस निकालने के बाद अवशेष पर जैविक इनाकुलोशन कराकर जैव उर्वरक निर्मित किये जाते है।

**6.फसलों में मल्च के रूप में विघाया जाना–**

बिछावन या समिश्रण एक अन्य लाभदायक अवशेष प्रबन्धन का तरीका है। इसके अनेक फायदे है जैसे– मृदा की उत्पादकता में टिकाऊपन पोषक तत्व उपलब्धता, मृदा ताप नियन्त्रित रहने के साथ–साथ मृदा की भौतिक दशा में सुधार होता है, इसलिये ऐसे

क्षेत्रों जहा वाष्पोत्सर्जन तेज होता है या वहां पानी की उपलब्धता कम होती है, वहां भूमि संरक्षण हेतु गेहूं की पत्तियां, पुआला आदि बिछाया जाना आवश्यक होता है।

## जैविक खाद का प्रयोग कैसे करें ?

किसान जैविक खाद के महत्व को पूर्ण रुपेण जानते है, लेकिन व्यवसायिक लाभ के लिए उन्हें बेहतर तकनीकों को बतलाने की आवश्यकता है–

1. इनके साथ फसलों के अपशिष्ट, रसोईघर के अवशिश्ट के साथ मिलाकर, केंचुआ खाद बनाकर (राक फास्फेट, सूक्ष्म पोषक तत्व आदि को मिलाकर) इनको अधिक गुणकारी बनाएं।
2. रासायनिक खाद के साथ इसका प्रयोग करें।
3. वैज्ञानिक विधि से इनका संरक्षण करें।
4. अधिक लाभ देने वाली फसलों में इनका प्रयोग करें।

### जैविक खाद का प्रयोग :

सभी खाद्यान्न/उद्यान वाली फसलों में जैविक खाद का अत्यन्त महत्व है। खाद्यान्न/उद्यान वाली फसलों में यह आवश्यक है कि मिट्टी की जल धारण क्षमता अच्छी रहे साथ ही साथ जड़ का फैलाव एवं हवा का आवागमन अवरुद्ध नही हो। अतः सभी खाद्यान्न/उद्यान फसलों में 10–20 टन प्रति हेक्टेयर जैविक खाद की अनुशंसा की जाती है।

### जीवाणु खाद का प्रयोग :

जब इतनी मात्रा में जैविक खाद तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग इन फसलों में किया जाता है तो यह आवश्यक जान पड़ता है कि इनमें पोषक तत्वों की दक्षता बढ़ाई जाय ताकि रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को कम किया जा सके। राइजोबियम कल्चर का उपयोग सभी खाद्यान्न/उद्यान फसलों जिनकी जड़ों में गाँठे बनती हैं, किया जाता है। एजोटोबैक्टर एवं फॉस्फेट घोलक कल्चर का उपयोग मिट्टी में नत्रजन बढ़ाने एवं मिट्टी में विद्यमान उर्वरक के रुप में डाले गये फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने में सहायक होती है।

### उर्वरकों के साथ कार्बनिक खादों का समाकलनः

कार्बनिक खादें जैसे गोबर की खाद और कम्पोस्ट पारम्परिक तौर से फसल उत्पादन और मृदा उर्वरता तथा उपज के स्थायित्व के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। देश में गोबर की खाद तथा कम्पोस्ट बनाने और उपयोग की बड़ी सम्भावनाएं हैं।

### उत्पादन पर प्रभाव :

अखिल भारतीय समन्वित सस्य अनुसंधान परियोजना के अन्तर्गत किये गये बहुस्थानिक प्रयोगों में देखा गया है कि गोबर की खाद एवं उर्वरकों के समेकित प्रयोग से विभिन्न फसल प्रणालियों में मृदा उर्वरता में सुधार के कारण अधिक उत्पादन प्राप्त हुआ। परिणामों में यह भी देखा गया है कि खरीफ फसलों में गोबर की खाद के प्रयोग से उर्वरक की आवश्यकता को पूरा किया जा सकता है। रबी की फसल में उर्वरक की मात्रा 25 प्रतिशत कम की जा सकती है बशर्ते उसमें पहले खरीफ फसल की 25 प्रतिशत नाइट्रोजन की आवश्यकता धान–धान और धान–गेहूँ फसल प्रणालियों में गोबर की खाद का प्रयोग करके की जाय।

गोबर की खाद जहां वर्तमान फसल को लाभ पहूंचाती है वहीं आगे की फसल को अवशेष प्रभाव से लाभ पहुंचाती है। लुधियाना में 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 120 कुन्तल गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर से प्राप्त धान की उपज 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की अपेक्षा अधिक थी और इसका अवशेष प्रभाव आगे गेहूँ की फसल में 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 30 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर रासायनिक उर्वरकों के बराबर धान–गेहूँ प्रणाली में पाया गया।

### मृदा उर्वरता पर प्रभाव :

गोबर की खाद और कम्पोस्ट का उर्वरकों के साथ उपयोग जहां पादप पोषकों की आपूर्ति का सीधा साधन है वहीं अप्रत्यक्ष रुप से भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार लाकर फसल उत्पादकता को बढ़ाता है। कई फसलों में किये गये परीक्षणों में देखा गया है कि अकेले उर्वरक प्रयोग की अपेक्षा गोबर की खाद और सिफारिस किये गये उर्वरक स्तरों से मृदा के कार्बनिक कार्बन स्तर और मृदा के सुक्ष्म पोषक

**सारिणी–1**

**जैविक खादों तथा जैव उर्वरकों के समतुल्य पोषक तत्व**

| सामग्री | निवेश की मात्रा | उर्वरकों के रुप में पोषक तत्वों की समतुल्य मात्रा |
|---|---|---|
| **(क) जैविक खादें / फसल अवशेष** | | |
| गोबर की खाद | प्रति टन | 3.6 कि.ग्रा. नाइट्रोजन |
| ढैंचा की हरी खाद | 45 दिन की फसल | 50–60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन |
| गन्ने की खोई | 5 टन प्रति हेक्टेयर | 12 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति टन |
| धान का पुआल+जलकुम्भी | 5 टन प्रति हेक्टेयर | 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति टन |
| **जैव उर्वरक** | | |
| राइजोबियम,एजोटोबैक्टर कल्चर | 5–5 कि.ग्रा. प्रति हे. | 19–22 कि.ग्रा. नाइट्रोजन |
| एजोस्पाइरिलम | 5 कि.ग्रा. प्रति हे. | 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन |
| नील हरित शैवाल | 10 कि.ग्रा. प्रति हे. | 20–30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन |
| एजोला | 6–12 टन प्रति हे. | 30–50 कि.ग्रा. प्रति हे. |

तत्वों की उपलब्धता में सुधार आता है। गोबर की खाद और उर्वरकों के समेकित प्रयोग से मृदा के भौतिक गुणों जैसे स्थूल घनत्व, जलधारण क्षमता, हाइड्रोलिक संचालन और सूक्ष्म जैविक गुणों जैसे एजोटोबैक्टर तथा अन्य सूक्ष्म जीवों की गणना में सुधार हुआ।●

(पृष्ठ 28 का शेष)

### मत्स्य बीज स्थानान्तरण

दो – तीन सप्ताह के मत्स्य बीज(2–3.5 सेमी0) को नर्सरी तालाब से प्रातः काल या सूर्यास्त से पूर्व इन्हे सूती कपड़े से बने महीन जाल जिसका मेस आकार 25–30 मिमी0 हो,द्वारा पकड़कर अंगुलिका अवस्था (फिंगरलिंग) तक बढ़ने के लिए पालन तालाब मे संचित कर कुल मत्स्य भार का 2–3 प्रतिशत दिया जाता है साथ – साथ इन्हे माइक्रोफाइट्स जैसे एजोला, वोल्फिया, लेमना आदि हरे चारे के रुप मे भी दिया जाता है जिन्हे मछलियां बड़े चाव से खाती हैं, नर्सरी तालाब से बीज को निकालने के एक दिन पूर्व अतिरिक्त भोजन नहीं देते हैं, अन्यथा फूले पेट होने के कारण इनके मरने की संभावना बढ़ जाती है।यदि आकाश मे बादल छाये हों या तेज धूप हो तो इनके मरने की आशंका बढ़ जाती है।दूर ले जाने के लिए इन मत्स्य बीजों को हापो मे 3–6 घण्टों तक रख कर इनकी अवस्था (कन्डीशनिंग) मे रखते हैं।

### देखभाल

समय–समय पर जाल चलाकर मत्स्य बीज के बढ़वार की जॉच करते रहना व लाल दवा का प्रयोग कर तालाब को आक्सीजन की कमी व पैरासाइट से बचाया जाता है।

## अमूल्य सुझाव

- ऊसर व बंजर भूमि का उपचार कर कृषि योग्य बनाकर खेती के प्रयोग में लाएं।
- सिंचाई जल उपयोग में बृद्धि हेतु ड्रिप एवं स्प्रिकलर पद्धति पर बढ़ावा देना तथा इसके प्रयोग पर प्रशिक्षण प्रदान कर इसे बढाने तथा क्रान्तिक अवस्थाओं पर उचित मात्रा में सिंचाई करें।
- कृषि लागत में कमी हेतु कृषि यन्त्रीकरण का प्रयोग कर जीरो टिलेज, सीडड्रिल व कम्बाइन हार्वेस्टर के साथ भूसा बनाने वाली मशीन के प्रयोग पर बल दिया जाय।
- मृदा स्वास्थ्य बढ़ानें के लिए जैविक उर्वरक, कार्बनिक खाद, फसल अवशेषों का प्रबन्ध व मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अनुसार उर्वरकों के संतुलित प्रयोग पर बल दिया जाना जिससे उत्पादन बढानें के साथ लागत में कमी लावे।

# शिशु मक्का (बेबी कार्न) की खेती

रेनू आर्या, उमेश बाबू एवं आर0के0 सिंह

मक्का की फसल भारतवर्ष में ही नहीं बल्कि विश्व में उगाई जाने वाली एक प्रमुख फसल है। अमेरिका में मक्का को सोना फसल के नाम से भी जाना जाता है। भारतवर्ष में मक्का की फसल खरीफ, रबी एवं जायद ऋतुओं में अर्थात वर्षभर उगाई जाती है। मक्का की उत्पादकता भी अन्य लघु धान्य फसलों की अपेक्षा अधिक है। आजकल मध्य उत्तर प्रदेश जैसे कन्नौज, फरूक्खाबाद, कानपुर, इटावा आदि जिलों में आलू की कटाई के पश्चात जायद में मक्का की खेती का प्रचलन दिनो दिन बढता जा रहा है। चूंकि आलू की फसल उगाने से मृदा की उर्बराशक्ति में काफी बृद्धि हो जाती है जिसका उपयोग मक्का की फसल उगाने में किया जा सकता है। मक्का की फसल पर परागणित वाली फसल है इसमें नर पुष्प ऊपर निकलते हैं जबकि मादा पुष्प भुटटे के साथ जुडे रहते हैं। मक्का की कई उप प्रजातियां पाई जाती हैं।

यह एक मक्का या भुटटा का ही स्वरूप है। बेबीकोर्न शब्द का तात्पर्य शिशु मक्का से है जिसमें पौधे के मध्यम भाग पर गुल्ली या पिंदिया निकल आती है जो रेशम जैसी कोमल कोंपल के साथ वृद्धि कर उग आती है। बेबीकोर्न शिशु मक्का कहलाता है। यह एक अत्यन्त स्वादिष्ट एवं पोषक तत्व युक्त उत्पाद है। जिसको आजकल भारत एवं विदेशों जैसे थाईलैन्ड और ताइवान निर्यातक देश के रूप में उभरे हैं। कृषकों ने इसको बडे स्तर पर व्यवसाय के रूप में विकसित किया है। भारतीय मक्का उत्पादक बेबीकोर्न से अभी तक उपयोग एवं आर्थिक महत्व से अपरिचित थे। यही कारण है कि अभी तक बेबीकोर्न का प्रचलन नहीं हो पाया। अब मक्का उत्पादक इसको भी सही एवं उसी तरह से उगा सकते हैं तथा मक्का की अपेक्षा 3–4 गुना अधिक शुद्ध लाभ भी प्राप्त कर सकते हैं। बेबीकोर्न की खेती का विकास धीरे धीरे होता जा रहा है। शहरों के आस पास कृषकों एवं ग्रामीण नवयुवकों व अन्य लोगों के रोजगार के अवसर बढते जा रहे हैं तथा अन्य अवसर उपलब्ध होने से आर्थिक स्थिति को भी बढावा मिलेगा जिससे मक्का उत्पादन क्षेत्रों में बेबीकोर्न को उगाना आसान है तथा ऐसे क्षेत्रों एवं प्रान्तों/राज्यों की मुद्रा अर्जित करने के अवसर भी बढेगे। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विदेशी मुद्रा को अधिक एकत्र किया जा सकता है। हमारे देश में मक्का के साथ बेबीकोर्न को उगाकर आर्थिक स्थिति में सुधार करना तथा अधिक लाभ प्राप्त करना होगा क्योंकि कृषि जलवायु की परिस्थितियों के अनुसार वर्ष में 3–4 बेबीकोर्न की फसलें ली जा सकती हैं। बेबीकोर्न उत्पादन का शोध कार्य सर्वप्रथम सन 1993 से मक्का अनुसंधान निदेशालय द्वारा हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र बजौरा कुल्लू घाटी में आरम्भ हुआ। तब से ही बेबीकोर्न के रूप में मक्का की खेती का प्रचलन बढ रहा है। लेकिन अभी भी सम्पूर्ण भारत में बेबीकोर्न के उपयोग एवं उत्पादन के विकास का विस्तार निजी एवं सरकारी दोनों क्षेत्रों को सघन एवं अनगणित प्रयासों को बढावा देना होगा जिससे धीरे धीरे उचित किस्म अधिक उत्पादन तकनीक की उपलब्णता तथा सभी उत्पादन या शस्य क्रियाओं का समावेश करना होगा जिससे उत्पादकों को बाजार आसानी से मिल सके।

बेबीकोर्न की उपयोगिता एवं पोषक तत्वता का एक विशेश महत्व है क्योंकि यह एक स्वादिश्ट पोषक तत्व वाली सब्जी है जिसमे अधिक पोषक तत्व जैसे कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, लौह, वसा, प्रोटीन, विटामिन्स तथा फासफोरस की मात्रा अन्य सब्जियों जैसे फूलगोभी, पत्तागोभी, सेम, भिन्डी, गाजर, बैंगन, पालक आदि से अधिक पाई जाती है। इसके अर्न्तगत कोलेस्ट्राल रहित रेशों की अधिक मात्रा पाई जाती है जिससे यह निम्न कैलोरी युक्त सब्जी है। इसकी बालियों या गिल्लियों को कच्चा खाया जा सकता है तथा इसी से अनेक भोजन युक्त खाद्य तैयार किये जाते हैं। इससे चीनी खाद्य जैसे विभिन्न सूप, मीट एवं

वि0व0वि, कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराईच–।। एवं ``वि0व0वि, कृषि विज्ञान केन्द्र, आजमगढ़

चावल के साथ तलकर चाइनीज फूड में मिक्स करके अचार, सलाद के रूप में सब्जियों के साथ मिक्स करके तथा बेसन कार्न पकोडे आदि के रूप में खाते है। इसके अतिरिक्त कैंडी, पकोडा, कोफ्ता, टिक्की, बर्फी, हलुआ और खीर बनाने में बेबीकार्न का उपयोग बहुत हो रहा है तथा डिब्बाबन्दी द्वारा इसे संरक्षित किया जा सकता है। शिशु मक्का, मक्के का एक अनिशेचित भुटटा है जिसे सिल्क निकलते ही तोड लिया जाता है। यह बहुत ही पौष्टिक खाद्य पदार्थ है जिसको सभी लोग उपयोग में ला सकते हैं।

खानपान की बदलती आदतों और हृदय रोगियों की बढती संख्या के कारण बाजार में बेबीकार्न की मांग दिन पर दिन बढ़ी है। ऐसे में इसकी बढती खपत को पूरा करने के लिए किसान बेबीकार्न की अधिक खेती करके अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं। उत्तर प्रदेश कृषि विभाग भी बेबी कार्न की खेती करने के लिए प्रदेश के किसानों की सहायता कर रहा है। मक्का अनुसंधान निदेशालय भारत सरकार भी प्रदेश में बेबीकार्न की खेती करने के लिए किसानो के बीच अभियान चला रहा है। बेबीकार्न मक्का की ऐसी फसल है जिसको वर्ष भर में 3 से 4 फसलें उगाई जा सकती हैं और एक फसल से एक हैक्टेअर में 40 से 50 हजार रूपये तक शुद्ध मुनाफा भी कमाया जा सकता है। पत्ती में लिपटे होने के कारण यह कीटनाशक दवाओं से भी मुक्त होता है।

## बेबी कार्न की खेती

### भूमि एवं जलवायु

सभी प्रकार की भूमियों में इसकी खेती की जा सकती है। जहां पर मक्का की खेती होती है वहां पर इसकी खेंती की जा सकती है। इसकी खेती के लिए अच्छी जीवांशयुक्त दोमट भूमियां सर्वोत्तम होती है। मिटटी का पी एच मान 7–8 के मध्य होना चाहिए।

बेबीकार्न के लिए हल्की गर्म एवं आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है परन्तु संकर किस्मों के कारण वर्ष में इसकी 3 – 4 फसलें आसानी से उगााई जा सकती हैं। बेबी कार्न की फसल उगाने के लिए वर्शाकाल उपयुक्त रहता है।

### प्रजातियां

शिशु मक्का के लिए मक्का की अपेक्षा अल्प अवधि में पकने वाली एकल क्रास प्रजातियां जैसे एच एम 4, बी एल 42, प्रकाश, पूसा अगेती संकर मक्का 3, पूसा अगेती संकर मक्का 5, विवेक संकर मक्का, संकर एम ई एच 133 – 3, संकर एम इ एच 1–14 एवं अर्ली कम्पोजिट उत्तम होती है।

उपरोक्त किस्मों में से बेबीकार्न का आकार लगभग लम्बाई 17.0 से 18.8 सेमी तथा व्यास 15.3 से 17.4 सेमी छिलका सहित तथा छिलका रहित गिल्ली की लम्बाई 8.2 से 9.3 सेमी तथा व्यास 1.16 से 1.18 सेमी होता है तथा पौधों की ऊंचाई 164 से 200 सेमी होती है जो 48 से 58 दिन में काटी जा सकती है।

## बुआई

### बीज की मात्रा

शिशु मक्का के लिए 25–30 कि0ग्रा0 प्रति हैक्टेअर बीज का प्रयोग करना चाहिए।

### बीज उपचार

फफूंदीजनित बीमारियों के वचाव के लिए बीजों को ट्राइकोडरमा 4 ग्राम प्रति किलो की दर से उपचारित कर बोना चाहिए अथवा फफूंदीनाशी रसायन जैसे थीरम अथवा केप्टान अथवा कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित करने से फसल में लगने वाली फफूदीजनित बीमारियों से बचाव हो जाता है।

### बुआई का समय

शिशु मक्का की बुआई किसी भी समय की जा सकती है परन्तु शीत ऋतु (दिसम्बर एवं जनवरी) जब सर्दी अधिक पडती है इसकी बुआई नहीं की जा सकती है।

### बुआई की विधि

शिशु मक्का की बुआई हल के पीछे कूंडों में अथवा सीडड्रिल द्वारा पंक्तियों में की जा सकती है। पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी जबकि पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सेमी उपयुक्त होती है। इस अन्तरण पर प्रति हिल 2 पौधे होना चाहिए। इस प्रकार पौधों का घनत्व 175000 प्रति हैक्टेअर होना चाहिए।

### उर्वरक की मात्रा

शिशु मक्का की खेती के लिए अच्छी उर्वराशक्ति वाली

मृदा की आवश्यकता होती है। खेत में 5 टन प्रति हैक्टेअर की दर से पूर्णरूप से सडी हुई गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट अथवा वर्मीकम्पोस्ट 2 टन प्रति हेक्टेअर की दर से बुआई के लगभग एक माह पूर्व खेत में अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए। मक्का की फसल को 150 किलोग्राम नत्रजन, 70 किलोग्राम फासफोरस तथा 50 किलोग्राम पोटाश तथा 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेअर की दर से प्रयोग करनी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई मात्रा, सम्पूर्ण फासफोरस, पोटाश एवं जिंक बुआई के समय बीज के नीचे कूंडों में उपयोग करनी चाहिए। शेष नत्रजन की एक तिहाई मात्रा बुआई के 25 दिन पश्चात तथा शेश एक – तिहाई मात्रा जीरा निकलते समय खडी फसल में उपयोग करनी चाहिए।

## सिंचाई

सर्वप्रथम सिचाई बुआई से पहले करें क्योंकि बीजों के अंकुरण के लिए पर्याप्त नमी होनी चाहिए। बेबीकार्न के लिए तीन सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। बुआई के 20 दिन पश्चात पहली सिंचाई, दूसरी सिंचाई फसल के घुटने की ऊचाई पर आने और तीसरी सिंचाई फसल में फूल आने के पूर्व करनी चाहिए। बेबीकार्न या गिल्ली बनते समय नमी की कमी नहीं होनी चाहिए।

शिशु मक्का की फसल को सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। शिशु मक्का के लिए मृदा में नमी की मात्रा 50 प्रतिशत उपलब्ध नमी होने की दशा होने पर सिंचाई कर देनी चाहिए। ध्यान रहे कि सिंचाई सदैव हल्की देनी चाहिए। जायद एवं रबी के मौसम में उगाई जाने वाली फसल में सिचाई का अधिक महत्व है। जायद की फसल में प्रत्येक 8–10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई दी जाती है जबकि रबी के मौसम में 15–20 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। खेत में अधिक पानी भरने पर जलनिकास के माध्यम से अतिरिक्त पानी को तुरन्त निकाल देना चाहिए क्योंकि मक्का की फसल जलभराव को बिल्कुल सहन नहीं कर सकती है।

## खरपतवार नियंत्रण

शिशु मक्का की फसल में मौसम के अनुसार चौडी पत्ती एवं घासीय कुल के खरपतवारों का प्रकोप अधिक मात्रा में होता है। शिशु मक्का की फसल के लिए खेत सदैव खरपतवार मुक्त होना चाहिए। चौडी पत्ती वाले खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए बुआई के तीन दिन के अन्दर 15 किग्रा एट्राजिन 600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिडकाव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पेन्डीमिथालिन 1 किग्रा सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेअर की दर से प्रयोग करने से चौडी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों का प्रभावी नियन्त्रण हो जाता है। ध्यान रहे कि खरपतवारों के प्रभावी नियन्त्रण के लिए सदैव फ्लेट फैन नोजल का प्रयोग करें तथा छिडकाव एक समान होना चाहिए। वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन फसल में खरपतवारों का प्रकोप होने पर 2–3 निराई गुडाई खुरपी से करने के साथ साथ हल्की मिटटी पौधों पर चढ़ाये, जिससे पौधे हवा में न गिरने पायें।

## नर मंजरी की तोडाई

शिशु मक्का की खेती के लिए पौधों में जैसे ही नर मंजरी निकलना प्रारम्भ हों उसे तोडकर अलग कर देना चाहिए। यह क्रिया करने से शिशु मक्का के भुट्टे की गुणवत्ता में सुधार होता है तथा भुट्टे भी अधिक संख्या में निकलते हैं।

## शिशु मक्का के भुटटों की तुडाई

भुटटों में सिल्क निकलने के 24 घन्टे के अन्दर शिशु भुटटे को तोड लेना चाहिए। विलम्ब से तुडाई करने पर गुणवत्ता में कमी आ जाती है। 15 दिनों के अन्तराल पर 2–3 तोडाइयां की जा सकती हैं। शिशु मक्का की गिल्लियां बेबी कार्न को भुटटे के छिलका से रेशमी कोपल निकलने के 2– 3 दिन के अन्दर ही सावधानी पूर्वक हाथों से तोडना चाहिए, जिससे पौधे की ऊपरी एवं निचली पत्तियां टूटने न पायें। इस प्रकार वर्तमान किस्मों से 4–5 गिल्लियां प्राप्त कर सकते हैं।

## बीमारियां एवं कीट नियन्त्रण

बेबीकार्न मक्का की फसल में बीमारियों का प्रकोप बहुत कम मात्रा में होता है, परन्तु छोटी अवस्था में पौध गलन रोग का प्रकोप हो जाता है। इसके नियन्त्रण के लिए बेविस्टीन या डाइथेन एम 45 का 1.5 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें। इसकी पत्तियों पर धब्बे रोग

का भी प्रकोप होता है यह रोग भी उपरोक्त उपचार से नियंत्रित हो जाता है। इसमें मांहू, केटरपिलर तथा भिनगा कीट का प्रकोप होता है। कीट नियंत्रण के लिए इन्डोसल्फान या रोगार या मोनोक्रोटोफास का 1 प्रतिशत घोल का छिडकाव करें।

**उपज**

एक अच्छी फसल से 15 –20 कुन्टल प्रति हैक्टेअर शिशु मक्का प्राप्त हो जाता है। शिशु भुटटों के अतिरिक्त 200 –250 कुन्टल प्रति हैक्टेअर हरा चारा प्राप्त हो जाता है।

**शिशु भुटटों का भन्डारण एवं विपणन**

तुडाई के पश्चात शिशु भुटटों की ग्रेडिंग की जाती है। ग्रेंडिंग प्रक्रिया भुटटों के आकार के अनुसार की जाती है। इन भुटटों को पालीथीन बैग में बन्द करके विपणन हेतु भेजा जाता है। बर्फ के टुकडों को बीच में रखने पर इन भुटटों को 5 दिनों तक रखा जा सकता है।

बेबीकार्न का बाजार मूल्य 30 रूपये प्रति किलोग्राम तथा चारे का मूल्य 70 रूपये प्रति कुन्टल होता है

**आर्थिक लाभः**

2000 किलो बेबीकार्न रू 30 रूपये की दर से 60000 रूपये

25000 किलोग्राम हरा चारा रू 70 रूपय की दर से 1750000 रूपये

कुल लाभ रू 2350000 रूपये

लागत रू 50000 रूपये

शुद्ध लाभ रू 185000 रूपये

उपरोक्त बेबीकार्न की फसल कृषकों एवं सब्जी उत्पादकों के लिए एक उद्योग का दर्जा प्राप्त करा सकती है। अतः शिशु मक्का शिक्षित बेराजगारो व पशु को बेबीकार्न के साथ वर्ष भर हरा चारा के लिए अवश्य उगानी चाहिये जिससे अधिक लाभ अर्जित किया जा सकता है। थोडी सी मेहनत एवं लगन से अधिक लाभ मिलने से बेहतर मुनाफे का सौदा हो सकता है।●


## पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रू0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।


किसान भाइयों,

लगातार फसल उगाने से मृदा के स्वास्थ्य में हो रही गिरावट के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में स्थिरता की स्थिति हो गयी है। समय रहते खेत की मिट्टी की दशा को सुधारने एवं उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि किसान भाई अपने खेत की मिट्टी की जाँच करवाने के प्रश्चात संस्तुति मात्रा में सुंतुलित उर्वरक का प्रयोग करें तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य बनवायें। फसल अवशेष को न जलाएं उसका प्रबन्ध कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाएं। खेत को खाली न छोड़ें बल्कि हरी खाद हेतु सनई व ढैचा पलटकर हरी खाद बनायें। जीवांशिक खादों का अधिक से अधिक प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने पर बल दें।

# अप्रैल माह में किसान भाई क्या करें

## फसलों में

डॉ. सौरभ वर्मा
सह प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

(1) गेहूँ के दाने में 10–12 प्रतिशत नमी रहने पर फसल की कटाई दाँतेदार नरेन्द्र हँसिया से करें। नमी की पहचान करने के लिए गेहूँ के दाने को दाँतों से काटें और यदि कट की आवाज आये तो समझें नमी उपयुक्त है।

(2) बीज शोधन करने के बाद मूँग बोने से पहले राइजोबियम कल्बर से उपचारित करना न भूलें।

(3) कल्चर को मिलाने के लिए आधा लीटर पानी में 50 ग्राम गुड़ घोलकर उबालने के बाद ठण्डा कर लें और इस घोल में कल्चर का पैकेट (200 ग्राम) मिलाकर मिश्रण तैयार कर लें, जिसे बोने के 2–3 घण्टे पहले 10 किग्रा बीज में मिला दें। बीज की बुवाई 10 बजे से पहले और सायंकाल 4 बजे के बाद ही करें।

## सब्जी एवं उद्यान में

डॉ. एस. के. वर्मा
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष

(1) आलू, चना, सरसों की कटाई के बाद खाली खेतों में लता वाली सब्जियाँ जैसे करेला, टिण्डा, ककड़ी, खीरा, लौकी एवं तोरई आदि की बुवाई 1 मीटर गुणा 50 सेमी दूरी पर करें।

(2) खेत में नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश की मात्रा 40:30:30 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से दें।

(3) गर्मी के मौसम को देखते हुए अपने बागों में सिंचाई का उचित प्रबंधन समय पर करें, जिससे बागों में लगे पेड़ों का विकास ठीक प्रकार से हो सके।

(4) अमरूद, नींबू प्रजाति के अंकुरित पौधों को क्यारियों में अथवा पॉलीथीन की थैलियों में स्थानान्तरित करें।

(5) आम के फलों का आकार बढ़ाने के लिये 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव करें।

## पौध संरक्षण में

डॉ. वी. पी. चौधरी
सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

(1) गन्ना में दीमक के नियंत्रण के लिये गामा बीएचसी 3.75 लीटर सिंचाई के पानी के साथ प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें।

(2) अगोला बेधक कीट नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट 35 ईसी 1.25 लीटर अथवा डाइमेक्रोन 250 मिली प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(3) मूँग में पीला चित्रवर्ण (मोजैक) रोग से बचने के लिए रोग वाहक कीटों का नियंत्रण मिथाइल ओडेमेटान 25 ईसी अथवा डाईमेथोएट 30 ईसी को एक लीटर को 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर 2 सप्ताह के अन्तर पर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

## पशुपालन

डॉ. अनिल कुमार
सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)

(1) गर्भित पशुओं के उत्तम स्वास्थ्य तथा भ्रूण के उचित विकास के लिये अतिरिक्त रातव अवश्य दें।

(2) दुधारू पशुओं को गर्मी तथा लू से बचाने के लिये उन्हें दिन में दो–तीन बार स्वच्छ तथा ताजे पानी से नहलाना चाहिए तथा साथ ही साथ पीने के लिये उन्हें साफ व ताजा पानी दिन में कई बार देना चाहिए।

(3) दुधारू पशुओं में मुख्यतः संकर नस्ल की गायों को गर्मी तथा लू से बचाव हेतु पशुशाला की खिड़कियों पर बोरे के पर्दे लगा दें ताकि समय–समय से उस पर पानी का छिड़काव करते रहें।

(4) पशुओं को गलाघोंटू बीमारी से बचाव हेतु इस माह के अन्त तक टीकाकरण अवश्य करा दें।

(5) मुर्गियों का मांस उत्पादन करने वाले किसान भाई गर्मी से बचाव हेतु सेट उत्तरी एवं दक्षिणी दिशा में खिड़कियों पर टाट के पर्दे लगाकर दोपहर बाद पानी का छिड़काव करते रहें।●

---

संकलनकर्ता : डॉ. अनिल कुमार, सह प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

# प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

**प्रश्न :– हैप्पी सीडर से गेहूँ बुवाई कराई थी बहुत लाभ मिला अब मैं धान की सीधी बुवाई ड्रम सीडर से करना चाहता हूं मुझे 135–140 दिन का अगेती प्रजाति जो ज्यादा उत्पादन दे यदि मंसूरी या अच्छी अन्य धान की प्रजाति जिसे हमे अभी ड्रम सीडर से लगा दे।**

**श्री विनय कुमार सिंह ग्रा0 व पो0, अमिहित केराकत जौनपुर (उ0प्र0)**

**उत्तर :–** सॉभा सब–1 प्रजाति का बीज शोधन के बाद अंकुरित बीज को ड्रमसीडर में तीन चौथाई भाग भरकर लेव किये खेत में लाइन से चलाकर 20 सेमी. लाइन से लाइन की दूरी पर बीज गिराते है। इसमें बीज का अंकुरण दिखने लगे तभी बुआई करनी चाहिए विलम्ब करने पर बीज के ड्रम से गिरने में समस्या हाती है। खेत में ज्यादा पानी नही होना चाहिए। खर–पतवार की खड़ी फसल में समस्या होने पर 500 मिली. नामिनी गोल्ड सोडियम/हे. की दर से 15–20 दिन पर छिडकाव करना चाहिए।

**प्रश्न–इस माह बेमौसम बरसात से क्या लाभ व हानि है ?**

**श्री अजीत पाठक, संवाददाता, बलिया**

उत्तर–पूर्वांचल में बार–बार वर्षा होने से खेत में खडी फसल गेहूं को नुकसान होगा। कद्दूवर्गीय सब्जियों को नुकसान होगा। खाली खेत की जुताई करने से लाभ होगा।

**प्रश्न–कद्दूवर्गीय सब्जियों में फलमक्खी का प्रकोप हो रहा है, रोकथाम बतायें।**

**श्री हरेराम चौरसिया, मनियर, बलिया**

उत्तर–फलमक्खी के प्रबंधन हेतु खेत में प्रति एकड़ की दर से 10 फेरोमोनट्रेप लगायें। गन्ध पास की सहायता से नर कीटों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। नर कीटों को आकर्षित करने हेतु मिथाइल यूजीनॉल 0.1 प्रतिशत़ एसीटामीप्रिड 0.1 प्रतिशत को 1.0 ली. शीरे के घोल को चौड़े मुंह वाली बोतल में डालकर 10 शीशी प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए। मिथाइल यूजीनॉल 4 भाग, एल्कोहल 6 भाग तथा थायामोथोजाम 1 भाग, 5 से.मी. लम्बे एवं 1 से. मी. मोटे वर्गाकार प्लाईवुड के टुकड़े को 24 घण्टे घोल में डुबोकर प्लास्टिक की बोतल लटकाकर प्रयोग करना चाहिए। यदि कीट का प्रकोप अधिक हो तो थायामोथोजाम दवा का 200 ग्राम मात्रा को 8–10 ली. पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

**प्रश्न :– वेस्ट डिकम्पोजर द्वारा अवशेष/कचरा प्रबन्धन कैसे करते हैं ?**

**श्री मंशाराम यादव, गंगापुर संसारा, हैदरगढ़, बाराबंकी**

**उत्तर :–** वेस्ट डिकम्पोजर लाभकारी सूक्ष्म जीवों का एक समूह है, जो कृषि, पशु और रसोई आदि से उत्पन्न सभी प्रकार के कचरे को 40 दिनों के भीतर उपयोग करने योग्य खाद के रूप में परिवर्तित करने में सक्षम है। वेस्ट डीकम्पोजर के घोल के साथ कचरे को गीला कर दें। जैव कचरे की एक 18–20 सेमी मोटी परत बनाई जाती है और वेस्ट डीकम्पोजर के घोल से दोबारा गीला कर देते है। जब तक कि 30–45 सेमी की मोटी परत न बन जाये, ऊपर की प्रक्रिया दोहराते रहे। समान कम्पोस्टिंग के लिये हर सात दिनों के अंतराल पर ढ़ेर के उलट–पलट करते रहें और इस ढ़ेर पर हर बार वेस्ट डीकम्पोजर का घोल डालते रहें। कम्पोस्टिंग की पूरी अवधि के दौरान 60 प्रतिशत नमी बनाये रखें। यदि आवश्यक हो तो और घोल मिला दें। कम्पोस्ट खाद 40 दिनों उपरान्त उपयोग करने के लिये तैयार होती है।●

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

# प्रसार निदेशालय

## आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

## कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

## के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

| पुस्तक | मूल्य रु. |
|---|---|
| आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध | 20.00 |
| जिमीकन्द की खेती | 15.00 |
| मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता | 12.00 |
| किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक | 50.00 |
| फसल उत्पादन तकनीक | 35.00 |
| जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल | 10.00 |
| फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार | 50.00 |
| गन्ने की आधुनिक खेती | 15.00 |
| जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक | 20.00 |
| केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन | 10.00 |
| व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन | 20.00 |
| फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन | 25.00 |
| आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक | 25.00 |
| गृहणियों के लिए बेकिंग कला | 25.00 |
| स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व | 20.00 |
| गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार | 20.00 |
| मछली पालन | 40.00 |
| फसल अवशेष प्रबंधन | 30.00 |

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
**प्रसार निदेशालय**
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित